श्री० श्री० योगीराज
बावा सहजनाथ जी की कथा
जाँड़ी

बावा गोरखनाथ जी, बावा सहजनाथ जी को अपना शिष्य बनाते समय मुदराएं डालते हुए।

यह पुस्तक

स्वर्गीय लाला किशनदास जी गुप्ता,

की समृति

में समस्त जंडयाल ब्रादरी को

समिपित की जाती है।

संग्रह करता :

बनारसी दास जंडयाल

एवं

कृष्णा चंद्र

शोधिक :

डा० सुधा गुप्ता

यह पुस्तक आद्रीश प्रिंटिंग प्रैस, जोशी एसटेट सोड़ल लिंक रोड, जालन्धर में प्रिंट की गई। फोन : 59125, 297087

विषय सूची

प्राक्कथन

परम आदरणीय इष्ट देव बावा सहजनाथ (पूर्ण भक्त) जी के द्वारा जंडयाल वंश की बेल कैसे रखी गई? इस लीला को जानने के लिऐ सभी जंडयाल बडे उत्सुक थे। इस इच्छा की पूर्ति के लिऐ श्री प्रवीन कुमार जंडयाल सपुत्र श्री रोशनलाल जी जंडयाल व श्री विजय कुमार गुप्ता सपुत्र श्री सतपाल गुप्ता ने लाला गिरधारी लाल जी जंडयाल की अध्यक्षता में काफी जानकारी इकट्ठी की। यह जानकारी पुराने बावा के चेलों, नाथों व भक्तों से इकट्ठी की गई। इस सिलसिले में श्री लाला बिशनदास जी गुप्ता व श्री बाबूराम जी गुप्ता का बहुत सहयोग रहा। उपरोक्त संग्रह को सरल भाषा में सही रूप देकर पहला संस्करण (जोकि केवल 10 पनों का था) सन् 1977-1978 में प्रकाशित किया गया।

इसके उपरांत काफी कोशिशों के बाद और जानकारी इकट्ठी करके अगला संस्करण 1985-86 में निकाला गया। फिर भी जंडयाल ब्रादी के बारे में इस संस्करण में अगर कोई त्रुटि रह गई हो उसे पूरा करने के लिऐ सब के सुझाव माँगे गऐ। इन सुझावों को भेजने का पता लाला बिशनदास जी गुप्ता का ही था।

लाला बिशनदास जी की रूहानी रूचि धार्मिक और समाज सेवा की ओर शुरू से ही रही। उनका जन्म 22 जुलाई 1908 को जम्मू के कलीठ ग्राम (तहसील अखनूर) में हुआ। उन्होंने B.A. पास करने के बाद जम्मू कश्मीर राज्य सरकार की नौकरी की और सन् 1964 में डिप्टी सैक्रटरी के औहदे से सेवा निवृत होने के बाद वह कई धार्मिक और समाज सेवा संस्थाओं के औहदेदार रहे। जंडयाल बराद्री के लिए भी उन्होंने बड़चड़ कर काम किया। लाला बिशनदास

जी ने अपना काम अपनी मृत्यु तक जारी रखा। उन्होंने बावा सहजनाथ जी के गुरू गोरखनाथ जी और मछेन्द्रनाथ जी के बारे में काफी जानकारी इकट्ठी की हुई थी। परन्तु वह इस जानकारी को अपने जीवन काल में पुस्तक का रूप न दे सके।

कार्तिक पूर्णमाशी 1997 के दिन अक्तूबर में हुई जंडयाल बरादरी की वार्षिक मेल में यह फैसला लिया गया था कि लाला साहिब की इकट्ठी की गई जानकारी का पूरा लाभ उठा कर पुस्तक का दूसरा संस्करण निकाला जाए। इस कार्य को पूरा करने का कार्यभार श्री बनारसीदास जी जंडयाल व कृष्ण चंद्र को सोंपा गया। इसी बैठक में यह भी तय किया गया, कि पुस्तक का दूसरा संस्करण कार्तिक पूर्णमाशी 1998 तक प्रकाशित हो जाना चाहिए।

बरादरी के इस निर्णय को ध्यान में रखते हुए, जहाँ तक हो सका, इस पुस्तक में आवश्यकतानुसार कुछ ओर नए विवरण जोड़ने के पश्चात इसका दूसरा संस्करण निकाला जा रहा है।

निवेदन

संभवता इस संस्करण में भी कई प्रकार की त्रुटियां रह गई हों अथवा कई घटनाएं इसमें सम्मिलित न हों। हमारे बहुत से बुर्ज़ुग तथा भाई मौजूद हैं और ऐसे नाथ भी मौजूद हैं जो सही कहानी विस्तार रूप से जानते हैं। उनसे सादर निवेदन है कि वह इन त्रुटियों को पूरा करने के लिऐ अपने-अपने सुझाव निम्नलिखित पते पर शीघ्र भेजने की कृपा करें, ताकि इस पुस्तिका के अगले संस्करण को प्रकाशित करने से पहले इसमें ऐसे सुझाव सम्मिलित किए जा सकें।

श्री बनारसीदास जंडयाल
809-ऐ, गांधी नगर, जम्मू
दूरभाष - 431889

श्री गणपति जी

नमो विष्णुस्वरूपाय नमस्ते रूद्रेरूपिणे ।
नमस्ते ब्रह्मारूपाय नमोऽनन्तस्वरूपिणे ।।

दोहा

" धरोनिया फरश करी । भक्तजनांचीं विघ्नें वारी ।।
ऐसा गजानन महाराजा । त्याचें चरणीं लाहो माझा ।।
शेंदुर शमी बहु प्रिय त्याला । तुरा दुर्वांचा शोभला ।।
उंदीर असे जयाचें वाहन । माथा जडित मुगुट पूर्ण ।।
नाग यज्ञोपवित रुळे । शुभ्र वस्त्रें शोभित साजिरें ।।
भावमोदक हाराभरी । तुका भावें पूजा करी ।। "

– संत तुकाराम

अर्थ

"जो हाथमें परशु लेकर भक्तजनोंके संकट दूर करते हैं, ऐसे गजानन महाराजके श्रीचरणोंमें मेरा प्रणाम हो। सिन्दूर और शमीपत्र उन्हें विशेष प्रिय हैं और उनके मस्तकपर दूर्वापुञ्ज शोभा देता है। उनका वाहन मूषक हैं। उनके मस्तकपर रत्नखचित पूर्ण मुकुट है। नागके यज्ञोपवीत और शुभ्र वस्त्रसे वे सुशोभित हैं। भावरूप मोदकोसे 'तुका' उनकी अनन्यभावसे पूजा करता है।"

गणेशपूजने विघ्नँ निर्मूलं जगतां यवेत् ।
निर्व्याधिः सूर्यपूजायां शुचिः श्रीविष्णु पूजने ।।

किसी कार्य के आरम्भ में भगवान गणेश जी की पूजा करने से संसार के विघ्न जड-मूल से नष्ट हो जाते हैं; सूर्य की पूजा से शरीर के रोग दूर हो जाते हैं और भगवान विष्णु की पूजा से बाह्मा और आभ्यन्तर पवित्रता आती है।

गुरूनानक देव जी ने गणपति जी के बारे में यूँ कहा:-

नानक नन्हें बनि रहो जैसी नन्ही दूब ।
सबै घास जरि जायगी दूब खूब की खूब ।।

"गणेश" शब्द का अर्थ है कि - जो समस्त जीव जाति के "ईश" अर्थात स्वामी हों।

श्री गणपति "गजेन्द्रव्दन" हैं। एतिहासिक मानना है कि भगवान शँकर से कुपित होकर उनका मस्तक काट दिया और फिर प्रसन्न होने पर हाथी का मस्तक जोड़ दिया। हाथी का मस्तक लगाने का तात्पर्य है कि श्री गणपति बुद्धिप्रद हैं। मस्तक बुद्धि का प्रधान केंद्र है। हाथी में बुद्धि, धैर्य एवं गाँभीर्य का प्राधान्य है।

श्री गणपति जी को ऐसा देवता बताया गया है जो समय नष्ट नहीं करता और हाथी की तरह फूँक-फूँक कर अपने कार्य आगे बढ़ाता है, चूहे की भाँति तेज़ चाल चलकर थोड़े समय के लिए रूक कर सोचता है और फिर तीव्रगति से आगे बड़ता है;

उसके नेत्र इतने छोटे हैं कि यह दूसरे के अवगुण या नहीं या बिलकुल कम देखता है, कान इतने बड़े हैं कि सब ओर कि सभी बातें उसके कान में पड़ जाती हैं और उसका पेट इतना बड़ा है कि सब कुछ पेट में रख लेता है। उनके हाथों में दो लड्डू - यश और कीर्ति हैं व दोनों और सिद्धि और बुद्धि है।

श्री गणपति जी की भारत के कोने-कोने में पूजा की जाती है। इसके इलावा चीन, तुर्कीस्तान, तिब्बत, जापान, बर्मा, नेपाल, उत्तरी मँगोलिया, जावा, बाली, बोर्नियो आदि में भी गणेश जी की प्रतिमाऐं मिलती हैं। बोर्नियो की गणेश आसन काँस्य की मूर्ति विशेष प्रसिद्ध है। चीन में गणेश जी की दो मूर्तियां एक साथ जूड़ी हुई खड़ी मुद्र में हैं। चीनी भाषा में श्री गणेश का नाम - "कुआन शी तिएन" बताया गया है और जापानी इनको "काँगितेन" के नाम से सम्बोधित करते हैं।

❖ ❖ ❖

प्रार्थना

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ।।
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय

भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ॥
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक ॥
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियोति सुखदेति फलप्रदेति ।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव ॥
गणेशपूजने कर्म यत्न्यूनमधिकं कृतम् ।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम ॥
अनया पूजया सिद्धि-बुद्धिसहितो
महागणपतिः प्रीयतां न मम ।

"गणनाथ। आप विघ्नेश्वर (विघ्नोंपर शासन करनेवाले) हैं। वरदाता हैं, देवताओंके प्रिय हैं, लम्बोदर हैं, विविध कलाओंसे पूर्ण हैं, सम्पूर्ण जगत्के हितैषी हैं, गजानन हैं, वैदिक यज्ञसे विभूषित और गौरी (पार्वती) के पुत्र हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तोंके संकट मिटानेमें सदा लगे रहते हैं, गणोंके ईश्वर एवं सर्वेश्वर हैं, कल्याणप्रद एवं देवेश्वर हैं, विद्याधर, विकट और वामन हैं तथा भक्तोंपर प्रसन्न होकर उन्हें वर देते हैं, आपको बारंबार नमस्कार है। आप ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्ररूप और गजरूप हैं, इन सभी रूपोंमें आपको बार-बार नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्वका रूप आपका ही स्वरूप है, आप ब्रह्मचारी हैं, आपको नमस्कार है। विनायक! आप भक्तप्रिय

देवता हैं; आपको नमस्कार है। लम्बोदर! आपको मोदक सदा ही प्रिय है; आपको नमस्कार है। देव! आप सदा मेरे सब कार्योंमें विघ्नोंका निवारण करें। गणेश! जो लोग आपको 'विघ्न-शत्रु-दलन', 'सुन्दर', 'भक्तप्रिय', 'सुखद', 'फलप्रद', 'विद्याप्रद' और 'अघहर' इत्यादि नामोंसे पुकारकर आपकी स्तुति करते हैं, उनके लिये आप नित्य ही वरदायक हों। गणेशजीकी पूजामें जो कर्म न्यून या अधिक किया गया है, उस सबके द्वारा सर्वात्मा गणपति सदा मुझपर प्रसन्न रहें।"

'इस पूजासे सिद्धि-बुद्धिसहित महागणपति संतुष्ट हों। इसपर उन्हींका स्वत्स है, मेरा नहीं।'

जय बावा सहज नाथ जी

भूमिका

योगी मछेन्द्र नाथ जी

द्वापन के अन्त और कलयुग के प्रारम्भ में भगवान विष्णु ने नारद जी को, नव नारायणों को द्वारका से लाने, भेजा। उस वक्त भगवान श्री कृष्ण अपने सिंहासन पर पधार रहे थे। और उनके पास ही उद्धव जी विराजमान थे। इतने में ही कवि हरी नारायण प्रबिद्ध, पिठलापन, ध्रुवमीन, करभंजन नाथ, नवनारायण इत्यादि वहां आ पहुंचे। विष्णु भगवान ने उन्हें आलिंगन करके अपने पास ही सिंहासन पर बैठा लिया। जब नवनारायण ने अपना स्वागत देखा तो उन्होंने बलवाने का कारण पूछा। तब भगवान विष्णु ने कहा कि आपको कलयुग में अवतार लेना है जिस तरह हंस दूध और पानी अलग कर देता है उसी तरह पृथ्वी पर अवतार लेकर आपको मृत्यु लोक के लोगों के कष्ट हरने हैं। भगवान विष्णु की आज्ञा सुनकर कवि नारायण जी के पूछने पर उन्हें बताया गया कि आप सब पृथ्वी पर अवतार लेकर नाथ सम्प्रदाय स्थापित करें। आपके साथ मेरे और भी अंश अवतार लेंगे। बालमिकी ब्यास जी, उद्धव जी और

जामवंत क्षानदेव जी के नाम से मैं भी अवतार लूंगा।

कवि नारायण जी के पूछने पर प्रभु विष्णु जी ने बताया कि पहले ही मुनी ब्यास जी ने भविष्य पुराण में सब वर्णन कर दिया है। ब्रह्मा जी की कृपा से अठासी हज़ार ऋषियों का जन्म हुआ है। उन्हीं के उदार से एक मछली ने गर्भ धारण किया। उसी उदार में कविनारायण (मछेन्द्र नाथ) का जन्म हुआ।

मछेन्द्र नाथ जी के जन्म के समय शिव और गौंरा पार्वती कैलाश पर्वत पर पधार रहे थे तभी पार्वती ने महादेव से पूछा कि आप किस मन्त्र का जाप करते हैं तो भगवान शिव ने कहा कि इस मन्त्र के लिये एकांत होना आवश्यक है। इस पर दोनों उठकर समुद्र के किनारे चले गये और ऐसी जगह चुनी जहां किसी भी मनुष्य का कोसों तक बास नहीं था। तब शंकर भगवान ने आसन ग्रहण करके पार्वती को ब्रह्माज्ञान सुनाना आरम्भ किया। तभी जिस मछली ने गर्भ धारण किया था वह समुंद्र तट के नज़दीक उसी स्थान पर थी। कथा के बाद महादेव ने पार्वती से पूछा कि कथा का सार समझ में आया तो मछली के पेट से आवाज़ आई कि सब कुछ ब्रह्मास्वरूप है। दूसरी आवाज़ सुनकर भगवान शिव ने मछली की तरफ देखा तो जाना कि मछली गर्भ से कवि नारायण जन्म लेने वाले हैं। इस पर शिव जी बोले तुम्हें मेरे उपदेश से महान ज्ञान लाभ हुआ है। परन्तु पूर्ण उपदेश लाभ दत्तात्रेय जी के दर्शनों द्वारा होगा। तुम सामर्थ होने पर बद्रिका श्रम आना, वहीं पर तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी। इतना कह कर शिव, पार्वती के साथ, कैलाश पर्वत पर चले गये।

दिन पूरे होने पर मछली माँ समुद्र के बाहिर अंडा देकर समुद्र में चली गई। कुछ देर बाद एक बगुला मछली पकड़ने समुद्र तट पर आया और वहां अंडा देखकर अपनी चोंच से अंडा फोड़ने लगा तो भीतर से आवाज़ आई और इसको सुनते ही बगुला भाग गया। कुछ देर बाद कामिक नाम का एक मछुआरा वहां आया और उसने देखा कि सूर्य समान तेज मुख वाला बालक रो रहा है। इतने में ही आकाशवाणी हुई कि हे कामिक यह बालक कवि नारायण का अवतार है और इसका अपने पुत्र समान लालन-पालन करने से तेरे सब पाप नष्ट हो जायेंगे। आकाशवाणी सुनकर कामिक बालक को अपने घर ले जाकर अपनी पत्नी से बोला कि यह बालक भगवान की देन है। एक सुन्दर बालक मिलने पर दोनों पति-पत्नी को बहुत आनन्द प्राप्त हुआ। धीरे-धीरे बालक मछेन्द्र नाथ पांच साल का हो गया। तब उसका पिता कामिक उसे एक दिन मछली पकड़ने को समुद्र तट पर ले गया। कामिक के जाल फैंकने पर काफी मछलियाँ आ गई। कामिक ने उन्हें टोकरे में डालकर बेटे के पास रख दिया तो बेटे ने सोचा कि मेरे मातृवंश का हनन करने वाला मेरा बाप कैसे हो सकता है और मैं यह कैसे सहन कर सकता हूँ। आस्तिक ऋषि ने जिस तरह जन्मेजय के यज्ञ से सर्पों के कुल को बचाया था उसी तरह मुझे अपने पिता को समझाकर यह उद्योग बंद करवाना चाहिये। यह सोचकर बालक ने सारी मछलियां टोकरे से उठाकर पानी में डाल दी। जब कामिक वापिस और मछलियाँ लेकर आया तो उसने अपने बेटे की कारकरदगी पर उसे डांटा और पूछा कि अब वह क्या खायेगा। उसे भीख माँगनी पड़ेगी। मछलियों के कारण बाप की डाँट-डपट से मछेन्द्र नाथ को

काफी दु:ख हुआ। उसने सोचा कि उसका अधर्मी बाप मानने वाला नहीं है। इससे भिक्षा माँग कर खाना हज़ार बार अच्छा है। यह सोचकर वह वहां से चलता बना और घूमता-फिरता बद्रिका आश्रम काफी दिन बाद जा पहुँचा। वहाँ उसने बारह साल कड़ी तपस्या की।

इधर भगवान दत्तात्रेय शिवाले पधारे और शिव की उपासना कर महादेव का मन मोहा, तब महादेव जी ने भुजा भेंट देकर आलिंगन किया और अपने पास बैठाकर कुशल समाचार पूछा और फिर दोनों बद्रिकाश्रम की रमणीकता देखने चल पड़े और उसी वन के नज़दीक पहुँचे जहां मछेन्द्र नाथ तप कर रहे थे। दोनों भागीरथी तट पर घूम रहे थे कि उनकी दृष्टि तप करते मछेन्द्र नाथ पर पड़ी। कलयुगी तपस्वी को देखकर दत्तात्रेय जी को बड़ा आश्चर्य हुआ। शिव जी ने दत्तात्रेय जी को मछेन्द्र नाथ जी के पास भेजा। दत्तात्रेय जी के यह पूछने पर कि मछेन्द्र नाथ किस उद्देश्य से तपस्या कर रहे हैं तो मछेन्द्र नाथ जी ने आँख खोली और दोनों हाथों को जोड़ कर प्रणाम करने के बाद कहा कि मैनें 12 साल से यहां कोई मनुष्य नहीं देखा तो आज आप अचानक कैसे पधारे और मुझे यह सवाल क्यों पूछ रहे हैं। प्रथम आप अपने बारे में बताने की कृपा करें। मैं यह समझता हूँ कि आपके दर्शन पाकर मेरी मनोकामना पूर्ण होने का समय आ पहुँचा है।

इतना सुनकर दत्तात्रेय जी बोले कि मैं अभी ऋषि का पुत्र हूँ अब बेटा जो तुम्हारी इच्छा हो बोलो। इतना सुनकर मछेन्द्र नाथ जी का रोम-रोम प्रफुल्लित हो गया। उन्होंने अपना मस्तक दत्तात्रेय

जी के चरणों में बार-बार झुकाया और अपने नैनों से प्रेम आँसू बहाकर दत्तात्रेय जी के चरण धो डाले। फिर दोनों हाथ जोड़ कर बोले प्रभु आप तो साक्षात् अंतरयामी हो, परन्तु इस दास को आप कैसे भूल गये। अब आप मेरे दुर्गुणों को दूर करने की कृपा करें तब दत्तात्रेय जी ने कहा कि बेटा अब चिन्ता मत कर। तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होने का वक्त आ गया है। यह कहकर दत्तात्रेय जी ने बालक के शरीर पर हाथ रख कर उसके कान में मन्त्र पढ़ा इससे मछेन्द्र नाथ जी का अज्ञान नाश हो गया और उन्हें चारों ओर ब्रह्मा-ही-ब्रह्मा नज़र आने लगा। तब दत्तात्रेय जी नें पूछा कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश कहाँ है तो मछेन्द्र नाथ जी ने बताया कि उन्हें ब्रह्मा-ही-ब्रह्मा दिखाई दे रहे हैं। मेरे चारों तरफ ईश्वर-ही-ईश्वर है। बालक का यह वचन और आत्मिक भावना देख दत्तात्रेय जी बालक का हाथ पकड़ अपने साथ भगवान शंकर के पास ले गये। शंकर जी ने बालक को सर्व-सिद्धि का स्वामी बनाने के लिये दत्तात्रेय जी को पढ़ाई करवाने का कार्य सोंपा। सब विद्याओं का मंत्र दिया और नाथ सम्प्रदाय का निर्माण कर दत्तात्रेय और भगवान शंकर अपने-अपने स्थान पर चले गए। मछेन्द्र नाथ जी तीर्थ यात्रा को रवाना हो गए। वह तीर्थ यात्रा करते हुए सप्त श्रृंगी जा पहुँचे और भक्ति भाव से वहाँ की देवी के दर्शन किए। जब तक मातेश्वरी की कृपा न हो तब तक कार्य-सिद्धि होनी दुर्लभ है। उन्होंने वहाँ देवी का अनुष्ठान किया। सात दिन के उपरान्त देवी प्रसन्न हुई। तब देवी माँ के पूछने पर मछेन्द्र नाथ जी बोले - "हे मातेश्वरी सांवरी मंत्र-विद्या को कविता में रचने का मेरा विचार है आप मेरी सहायता करें और इस मंत्र-विद्या को सफल बनायें"।

देवी प्रसन्न होकर उन्हें मार्तण्ड पर्वत पर ले गई। यहां देवी के चमत्कार से योगी ने सभी देवी-देवताओं के दर्शन किए लेकिन कुछ बोले नहीं। फिर देवी जी बोली यहाँ से ब्रह्मगिरि पर्वत के नज़दीक अंजनी पर्वत पर काली माँ का मन्दिर है। पहले वहाँ जाकर नमस्कार करो। फिर दक्षिण दिशा में गंगा के पार तुम्हें निर्मल जल के एक सौ सरोवर दिखाई देंगे। उनमें नागरवेल डालना जिस में बेल मुर्झा जाए, उसमें स्नान नहीं करना और जिसमें नहीं मुझऐं उसमें स्नान कर जलपान करना। मुर्झा जाने पर सूर्य सहस्त्र नाम पाठ करना, इससे आगे का दिग्दर्शन होगा। इस के पश्चात काँच के सरोवर का जल लेकर सूर्य को अर्ग दे कर बाकी जल वृक्ष में डालना, इस से सब देवता प्रसन्न होंगे। अगर यह कार्य एक बार न हुआ, तो छः माह बराबर इसी तरह करने से सब देवता अवश्य प्रसन्न होकर तुम्हारी मनोकामना पूरी करेंगे। योगी ने सारे कार्य सात दिन में पूरे किए और सावरी मंत्र की पुस्तक कविता में तैयार हो गई।

योगी गोररवनाथ जी

योगी मछेन्द्र नाथ जी यात्रा करते हुए बंगला प्रान्त की धारा नगरी में आ पहुँचे जहां **सूर्यदयाल नामक पंड़ित** रहता था। वह ईश्वर भक्त और साधू-संतों का सेवक था। उसकी पत्नी का नाम सरस्वती था। सरस्वती सुन्दर, सुशील, पवित्रता नारी संतानहीन थी। यह दोनों अपनी समर्था अनुसार नित्यप्रति साधू-संतों की सेवा तन,

मन, धन से करते और हरि भजन में मगन रहते थे। एक दिन मछेन्द्र नाथ जी भिक्षा पात्र उठाऐ हुए चिमटट्ा बजाते हुए और अलख-अलख उच्चारण करते हुए सरस्वती के दरवाज़े पर आ पहुँचे। सरस्वती ने भिक्षा दान के पात्र में डालकर उनकी तरफ देखा, तो सूर्य समान चहरे को निहारती रह गई। योगी जी समझ गए कि यह नारी दुखयारी है। इस पर योगी जी ने पूछा कि माता जी आप क्यों दुखी हैं और क्या इस दुःख की कथा मुझे बताऐंगी। इतना सुनकर सरस्वती बोली सिर्फ संतान की कमी है और बाकी सब कुछ भगवान का दिया हुआ उनके पास है। अगर आपके आर्शीवाद से एक बेटा हो जाए तो पूर्ण सुखी हो जाऊँगी। उसके आँसू देखकरं योगी जी को दया आई और वह अपनी झोली से भस्म निकालकर बोले कि इस भस्म को ऋत्तु स्नान करने के बाद खीर में डालकर और प्रभु का नाम लेकर खा लेना। तुम्हारे यहाँ भगवान हरिनारायण का अंशी अवतार पैदा होगा जो सब रिद्धि-सिद्धि का स्वामी होगा। बारह वर्ष बाद नगर भ्रमण करता हुआ तुम्हारे घर आऊँगा और तुम्हारे पुत्र को अपना शिष्य बनाऊंगा। सरस्वती ने भस्म रख दी और मन में विचारा कि ऋत्तु वन्ती होने के पश्चात इसका सेवन कर लूंगी। इसके पश्चात जब सह पड़ोस में सहेलियों के पास गई तो योगी और उसकी चर्चा के बारे में सब को बताया। एक सहेली ने कहा कि भूलकर भी भस्म को न खाना, क्योंकि यह सब सन्त-महन्त पाखंडी होते हैं और अपने खाने-पीने के तरीके बनाते रहते हैं। कई बदमाश दुश्मन के कहने से ज़हर दे जाते हैं और कई जादू करके कपड़े-ज़ेवर और घर की चीज़ें चौरी कर के भाग जाते हैं। अगर भस्म से संतान होने लगे तो

कोई भी बिना संतान न रहे। यह डोंगी न जाने कितनी औरतों की इज़्ज़त लूटते हैं, क्योंकि कलियुग में डोंगियों का ही बोल-बाला है। असली साधू-सन्त को दुनिया से क्या लेना-देना क्योंकि वह जंगलों में ही रहते और तपस्या करते हैं।

जितनी सहेलियां मिली उतनी ही बातें बनी और सब की सब साधू-सन्तों के खिलाफ थी। किसी ने भी भस्म खाने की राय न दी। सरस्वती अपनी सहेलियों की बातों में आकर सोच में पड़ गई और यह फैसला लेकर कि उसकी सहेलियां ठीक कहती हैं, उसने घर आकर भस्म को गोबर के गड्डे में डाल दिया। उसी गड्डे में नगर के दूसरे लोग भी गोबर व कूड़ा-करकट डालते थे जिसके कारण गड्डा कुछ समय में ही भर गया, परन्तु योगी की भस्म ने अपना प्रभाव कम न होने दिया। खेत की तरह उस गड्डे में भी अंकूर फूटे, अगरचे पानी की असुविधा होने के कारण ऐसा होने में देर लगी। धीरे-धीरे बारह वर्ष होने को आए और सरस्वती संतानहीन ही रही।

बारह वर्ष पूरे होने पर योगी अलख करता हुआ आ पहुँचा। सरस्वती के दरवाज़े पर आते ही उसने यह सोचा कि बालक ग्यारह साल और कुछ महीने का हो गया होगा। उधर नियमानुसार सरस्वती संत के लिए भिक्षा लेकर आई, तो उसने बारह वर्ष पहले के योगी को पहचान लिया और सह पीली पड़ गई। उसने काँपते हुए भिक्षा डालने के लिए अपना हाथ आगे बड़ाया, परन्तु योगी ने भिक्षा पात्र पीछे हटाते हुए कहा, कि माता अब आपका बेटा तो काफी बड़ा हो गया होगा। क्या आप मुझे उसके दर्शन करवाऐंगी। सरस्वती

संकट में पड़ गई और उसने सारी सच्ची बीती कहानी बता दी। इस पर योगी ने आदेश दिया कि उसे वह जगह बताई जाए जहाँ विभूती को फैंका गया। सरस्वती ने उसे लेजा कर उस गड्डे को बताया जहाँ विभूती फैंकी गई थी। योगी ने गड्डे को देखकर आवाज़ दी "हे हरिनारायण सूर्य पुत्र यदि तुम्हारी उत्पति हो चुकी है तो गड्डे से बाहर निकल आओ"। इसके उत्तर में गड्डे से आवाज़ आई कि "गुरू जी मैं पैदा हो चुका हूँ परन्तु गोबर के ढेर में दबा होने के कारण बाहर निकलने में असमर्थ हूँ, आप मुझे यहां से निकालने की कृपा करें। गड्डे से आवाज़ सुनकर ग्रामवासियों में बड़ा कौतूहल हुआ और उन्होंने गड्डा साफ करना शुरू कर दिया। कुछ देर बाद गोबर के ढेर में से एक अति सुन्दर तेजधारी बालक निकला। बालक को देखकर योगी मछेन्द्र नाथ मुस्कराकर बोले "तुम्हारी उत्पति गोबर से हुई है, इसलिए तुम्हारा नाम गोरखनाथ रखता हूँ"। बालक आँखों में आँसू भरकर योगीराज को देखने लगा, तो योगीराज मछेन्द्र नाथ बोले, तुम सूर्य पुत्र हो, तुम्हारा यश सूर्य के समान ही सारे संसार में फैलेगा। इस तेजस्वी बालक को देखकर सरस्वती के नैनों से नीर बहने लगा। उसने योगीराज की ओर याचना की दृष्टि से देखा। योगीराज बोले "माता तुम्हारे भाग्य में विधाता ने पुत्र लिखा ही नहीं, तभी तो मेरा किया धरा आपके लिए व्यर्थ हो गया। परसी हुई थाली सामने से उठ गई। आपको अपने कार्यों का भोग भोगना है। अब आप संतोष करो, और ईश्वर इच्छा समझ अपने मन को समझाओ, कि भाग्य में सन्तान सुख लिखा ही नहीं। अब आप प्रेम से प्रभु के गुण गाओ, जिससे पिछले पाप धुल जाऐं। फिर पुत्र सदगति का ज़रिया भी तो नहीं

है"। इस तरह योगीराज ने पतिव्रता को धीरज दिया और गोरखनाथ जी को अपने संग ले जाकर नाथ सम्प्रदाय में दाखिल कर दिया।

तीर्थ यात्रा करते-करते मछेन्द्रनाथ जी और गोरखनाथ जी उत्कल राज्य में पहुँचे। वह राज्य के बाहर ही एक मन्दिर में ठहर गए। यह स्थान कनकगिरी कहलाता था। यहां वह गोरखनाथ की भक्ति की परीक्षा करना चाहते थे। यहां उचित अवसर देख योगीराज जी ने गोरखनाथ से कहा बेटा बड़ी भूख लगी है और इसकी शान्ति भी परम आवश्यक है। अपने गुरू की वार्ता सुनकर गोरखनाथ बोले आप आज्ञा दें गुरूदेव मुझे क्या करना है। इस पर योगीराज बोले, बेटा नगर से भिक्षा मांग कर लाना ही सबसे सरल उपाय है। गोरखनाथ गुरू आज्ञा शीश चढ़ा भिक्षा माँगने चल पड़े। थोड़ी दूर जाने के बाद उन्होंने देखा कि एक ब्राह्मण के घर बड़ी धूम-धाम के साथ शराद हो रहा है। वहाँ जाकर उन्होंने अलख नाम का उचारण किया। अपने द्वार पर अतिथि को भिक्षा पात्र लिए गृहस्वामिनी पूरा पका हुआ पकवान लेकर द्वार पर आई और गोरखनाथ के पात्र को भर दिया। गोरखनाथ अलख का उचारण करके चल दिए। फिर उन्होंने अपने पात्र को योगीराज के सामने रख दिया। मछेन्द्रनाथ जी ने भोजन की बड़ी प्रशंसा करते हुए उड़द की दाल के बड़े और खाने की इच्छा प्रकट की। गोरखनाथ जी गुरू की आज्ञा अनुसार बड़े माँगने चले गए और यह विचार करते गए कि अगर गृहस्वामिनी ने इनकार कर दिया तो क्या होगा। जब वह द्वार पर पहुँचे तो अलख का उचारण सुनकर गृहस्वामिनी क्रोध भरे स्वर में बोली, कि अभी भी तुम्हारी भूख नहीं

मिटी। इसपर गोरखनाथ जी बोले "माता जी मेरे संग गुरूदेव हैं। उन्होंने सारी सामग्री प्रेमपूर्वक खा ली है। परन्तु उनकी इच्छा एक-दो बड़े खाने की है, कृप्या दे दें। गृहस्वामी ने गोरखनाथ पर लक्ष्ण लगाया, कि वह गुरू का नाम को ऐसे ही बदनाम कर रहा है और उसे खुद खाने की मरज़ी है। इसपर गोरखनाथ जी ने कहा कि वह कभी झूठ नहीं बोलते। आप गुरू की इच्छा पूरन करदें और मैं आपकी हर परेशानी दूर करने को मौजूद हूँ। इसपर गृहस्वामिनी तड़क बोली कि मेरी मनोकामना पूरी करोगे और एक बड़े के बदले गोरखनाथ कि एक आँख माँग ली। गोरखनाथ जी बोले यह कौन सी बड़ी बात है मैं गुरू की इच्छा पर जान भी दे सकता हूँ। इसपर गृहस्वामिनी बोली कि मैं बड़ा लेकर आती हूँ तू तब तक आँख निकाल कर रख। इतना कह कर जब गृहस्वामिनी ने मुख मोड़ा तभी गोरखनाथ ने उंगली डालकर अपनी पुतली चीरी और आँख बाहर रख दी। गृहस्वामिनी जब बड़ा लेकर लौटी, तो गोरखनाथ की करतूत देखकर उसके होश उड़गए। मन ही मन में दुखी होकर लोटने लगी तो गोरखनाथ ने कहा माता जी आँख तो लेती जाओ। वह पश्चाताप के स्वर में बोली बेटा मैं तेरी आँख लेकर क्या करूंगी? मैं तो तुम्हारी गुरू भक्ति देखकर खुद दुखी हो रही हूँ। बेटा मुझे माफ कर दो। इतना सुनकर गोरखनाथ ने अपनी आँख पुतली पर धर ऊपर से पट्टी बांद दी। गोरखनाथ की इच्छा थी, कि इस घटना का पता गुरूदेव को न लगे। उन्होंने गुरू के पास जाकर एक बड़ा रखकर कहा, गुरू जी, एक ही बड़ा मिला। गुरू ने अपने शिष्य की आंख पर पट्टी देखकर पूछा कि यह क्यों

बांदी है। गोरखनाथ जी ने बात छुपाते हुए कहा कि दर्द है। मछेन्द्रनाथ जी बोले कि देखूं दर्द का कारण क्या है? गोरखनाथ ने असल बात बता दी और कहा कि अंत में उसने आँख भी नहीं ली और बड़ा भी दे दिया। इसमें गृहस्वामिनी का कोई दोष नहीं इसलिए उसे क्षमा कर दें। मछेन्द्रनाथ बोले जब तू ही क्षमाकर आया है तो मैं क्यों व्यर्थ रूष्ट होऊँ? बेटा अब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि मुझे गुरूभक्त चेला मिल गया है जो मेरा नाम रोशन करेगा। मैं तुम्हें हर प्रकार की गुप्त विद्याऐं सिखाकर परिपूर्ण कर दूँगा। गोरखनाथ ने अपना सर गुरू के चरणों में झुकाया। योगीराज ने उसका सर उठाते हुए आंख की पट्टी खोली और पुतली को साफ जल से धोकर पवित्र किया और भली प्रकार पुतली को आंख में जमाकर मंत्र जाप किया जिस से आँख पहली जैसी हो गई। योगीराज ने अपने शिष्य को सर्व विद्या सम्पन्न बना दिया।

गुरू और शिष्य जब भ्रमण करते हुए बद्रीनाथ पहुँचे, तो गुरू जी ने गोरखनाथ से कहा कि तुम्हें शिव कृपा की आवश्यकता बाकी है और उनकी कृपा के बिना सब विद्याऐं अधूरी हैं। अपने गुरू से पूछने पर कि भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिए कौन सी विधि अपनानी होगी, तो मछेन्द्रनाथ जी बोले – "बेटा बद्रीनाथ आश्रम के पास ही तपोवन है वहां घोर तपस्या कर शंकर से वरदान प्राप्त करना है। तभी तुम्हारी विद्याऐं संपूर्ण होंगी"। इसपर गोरखनाथ जी बद्रीनाथ और मछेन्द्रनाथ जी तीर्थ यात्रा के लिए चल पड़े। वहां 12 साल की घोर तपस्या के बाद शंकर भगवान का वरदान प्राप्त किया।

अजायानाथ नामक योगी बहुत पहुँचा हुआ संत था। उसने गोरखनाथ से मिलकर भेंट की और अधिकारी समझकर गोरखनाथ उसे अपने साथ भ्रमण करते हुए समुद्र तट पर घूमते हुए हिंगलाज पर्वत पर जा पहुँचे। वहां से गंधार देश होते हुए सुलेमान पर्वत पर पहुँचे। सुलेमान पर्वत पर अजायानाथ के बहुत से शिष्य रहते थे। उन सब ने गोरख गुरू का बड़ा आदर-सत्कार किया, तब गोरख गुरू ने प्रसन्न होकर उन्हें योग साधन की अनेक क्रियाऐं सिखाई और आर्शीवाद दिया। फिर वहाँ से प्रसन्नचित विदा होकर कटाक्षराज तीर्थ जा पहुंचे और एक ऊँचे टीले पर जाकर विश्राम किया। वह टीला अब तक गोरख टीले के नाम से विश्व में मशहूर है। इसी टीले पर उनके शिष्य बने। यह टीला ज़िला जेहलम पाकिस्तान में है। ऐसा माना जाता है कि वह वहां पच्चास साल तक समधिस्त रहे। समाधि खुलने के पश्चात गोरख गुरू उत्तराखन्ड की तरफ अकेले ही चल पड़े। अजायानाथ अपने शिष्यों के साथ सुलेमान पर्वत पर ही रह गए।

नाथ सम्प्रदाय

इस तरह नाथ सम्प्रदाय की उत्पत्ति हुई। यह उत्पत्ति आदिनाथ भगवान शिव द्वारा मानी जाती है। लोक कल्याण के लिये नव-नारायणों ने नवनाथों - कविनारायण ने श्री मछेन्द्रनाथ, करभाजननारायण ने गहनिनाथ, अन्तरिक्षनारायण ने जालन्धरनाथ, प्रबुद्धनारायण ने कानीफानाथ, आविहोत्रनारायण ने नागनाथ,

पिप्पलायननारायण ने चर्पटनाथ, चमसनारायण ने रेवणराथ, हरिनारायण ने भृर्तहरिनाथ तथा द्रमिलनारायण ने गोपीचन्द्रनाथ के नाम से इसे समय-समय पर धराधाम पर फैलाया। आदिनाथ शिव से जो तत्वज्ञान श्री मछेन्द्रनाथ ने प्राप्त किया था, उसे ही शिष्य बनकर शिवावतार गोरक्षनाथ ने ग्रहण किया तथा नाथपंथ और साधना के प्रतिरूठापक परमाचार्य के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की। महाकालयोग शास्त्र में स्वयं शिव ने यही कहा है –

अहमेवास्मि गोरक्षो मद्रूपं तन्त्रिबोधत ।
योग-मार्ग प्रचाराय मयारूपमिदं धृतम् ।।

अर्थात् मैं ही गोरक्ष हूँ। उसे मेरा ही रूप जानो। योग मार्ग के प्रचार के लिये मैंने ही यह रूप धारण किया है। इस प्रकार श्रीगोरक्षनाथ स्वयं सच्चिदानन्द शिव के साक्षत्स्वरूप है।

14वीं शती के स्वामी विद्यारण्यकृत "शंकर दिग्विजय" नामक ग्रंथ से यह पता चलता है कि वे श्री शंकराचार्यजी के पूर्ववती थे। इस ग्रंथ में श्री शंकराचार्यजी ने अपने शिष्य से कहा है, कि जैसे प्राचीन काल में मछेन्द्रनाथ नाम के एक महात्मा योगी ने परकाया प्रवेश कर अपनी शरीर की रक्षा का भार अपने शिष्य गोरक्षनाथ को सौंपा था, वैसे ही मैं तुम्हें परकाया प्रवेश्न के पहले अपनी शरीर की रक्षा का भार सौंपता हूँ।

योगीराज बावा सहज नाथ जी का जन्म तथा बाल्यावस्था

स्यालकोट के राजा सालवाहन के पुत्र पूरन भगत की कहानी सारे पंजाब में और सुदूर अफगानिस्थान तक प्रसिद्ध है। मिया कादरयार की लिखी हुई एक पंजाबी कहानी पर "संग पूरन भगत", गुरूमुखी अक्षरों में छपी है तदनुसार पूरनभगत उज्जैनी के राजा विक्रमादित्य के वंशज थे। उनके बाप-दादों ने स्यालकोट के थाने पर अधिकार कर लिया था।

राजा सालवाहन की दो रानियां थी, बड़ी का नाम अच्छरां और छोटी का लूनां था। अच्छरां प्रभु भक्त थी परन्तु लूनां मायावी थी। लुनां अच्छरां की अपेक्षा अधिक सुन्दर भी थी। इसी कारण उसने राजा से विवाह के पहिले वचन लिया था कि राजा उसके कहने के अनुसार अधिकतर चला करेगा। किसी की भी कक्ष से सन्तान न होने के कारण दोनों रानियां तथा राजा बहुत दुःखी रहते थे। ईश्वर-भक्त होने के कारण रानी अच्छरां अपने इष्टदेव, महाप्रसिद्ध तथा शक्तिमान परम गुरु श्री श्री गोरखनाथ जी की आराधना में मग्न रहती थी। बढ़ते-२ आराधना में इतनी एकाग्रता और सद्भावना उत्पन्न हो गई कि परसगुरु गोरखनाथ जी ने स्वयं अपने स्थान टिल्ला (पाकिस्तान, जिला जेहलम) से अपने कुछ प्रसिद्ध चेलों सहित जन-कल्याण के लिए स्यालकोट के निकट एक जंगल में आकर अपना आसन जमा लिया। उनके वहाँ विराजमान होने से सूखा जंगल हरा-भरा हो गया, बहार सी आ गई, पक्षी

आनन्द में चहचहाने लगे। उनके वहां आने की सूचना शीघ्र ही दूर-दूर तक पहुँच गई। उनकी भक्त रानी अच्छरां को भी स्वप्न में अपने इष्टदेव के दर्शन होने लगे। उसको भी सूचना मिली कि वह निकट ही आ पधारे हैं। एक दिन रानी अच्छरां और राजा सालवाहन बड़े पवित्र हृदय से आकांक्षा लेकर महागुरुदेव की समाधि के पवित्र स्थान पर पहुँचे। अपने इष्टदेव की प्रदक्षिण करने के पश्चात् दोनों ने उनको साष्टांग प्रणाम किया। दोनों सच्चे हृदय से उनकी सेवा में तत्पर हो गए। अपरी समाधि खुलने पर महाराज ने राजा-रानी को वहां आने का कारण पूछा। रानी बोली, "महाराज आप स्वयं अन्तर्यामी हैं। आप ही ने कृपा करके हमें सर्वसुख पर्याप्त सीमा में प्रदान किए हुए हैं परन्तु संतान न होने के कारण मन अशांत सा रहता है।" महाराज ने मौन धारण कर लिया। कुछ समय होने पर महाराज ने कहा कि "हे राजन! तुम्हारे भाग्य में कई जन्म सन्तान नहीं है। परन्तु रानी अच्छरां चूंकि सच्ची प्रभु भक्त है और इसकी अनन्य भक्ति तथा कठोर तपस्या द्वारा ऐसा फल मिलना सम्भव है। परन्तु आपके पास मुश्किल से ही ठहर सकेगा।" राजा-रानी उनकी तथा उनके चेलों की सेवा में बड़े भक्ति-भाव से संलग्न हो गए। होते-२ एक दिन महाराज से प्रसन्न होकर उन्हें कहा कि वह उनके समाधि स्थान के सब योगियों को अच्छे भोजन से प्रसन्न करें। राजा ने बहुत दूर-२ से दूध मंगवा कर खीर बनवाने के लिए बड़े-२ कढ़ाओं में डलवा दिया। कढ़ाओं में डालते ही दूध जमता गया। रानी बहुत चिन्तित हुई। परन्तु इष्टदेव में अटल विश्वास होने के कारण झट उनके समाधि-स्थान पर पहुँची और उनकी परिक्रमा और साष्टांग प्रणाम

करने के पश्चात् उनके धूनिकुंड से विभूति ले आई और इसे दूध के कढ़ाओं में डाल दिया, विभूती के दूध में मिलते ही दूध झट सही हालत में आ गया। सात्विक भोजन (खीर) तैयार होने पर बड़े स्नेहपूर्वक इश्टदेव तथा सारे योगियों को खिलाया गया, राजा-रानी की अटूट श्रद्धा, दृढ़ निश्चय और सरलता पर अति प्रसन्न हो, योगीराज ने वरदान दिया कि, "देव-कृपा से १२ वर्ष के पश्चात् आपके यहाँ एक सुन्दर बालक होगा!" इस समय महाराज जी ने अपने समाधि स्थान के निकट एक बांस का पौधा लगा दिया और राजा-रानी को कहा कि वह अपने भक्ति-भाव सहित इस पौधे को सींचते रहें। तब महाराज जी ने माली को अकेले समझाया कि "बारह वर्ष से पहले कोई इस बांस को ना काटे। यदि कोई कष्ट आन बने तो मुझे याद करना"। ऐसा कह कर वह वहां से प्रस्थान कर अपने निवास (टिल्ला) को चले गए। दोनों राजा-रानी गुरु गोरखनाथ जी के कर-कमलों से लगाए हुए बांस के पौधे को भक्ति भाव सहित सींचते रहे और माली ने भी इस पौधे की ध्यानपूर्वक रक्षा की। अन्त में लगभग बारह वर्ष की श्रद्धा पूर्ण भक्ति के फल स्वरूप पूर्णमाशी की एक सुबह उन्हें (राजा-रानी को) एक सुन्दर बालक मिला। दूसरी ओर उसी सुबह से बांस का पौधा भी देव कृपा से वहां जंगल में दिखाई न दिया।

जिस जिसने भी राजमहल में सुन्दर बालक के आने की सूचना सुनी, वह प्रसन्नता से झूम उठा और इस प्रकार सारे राज्य में खुशी की एक लहर सी दौड़ गई।

ग्रहयौग, आज्ञातवास तथा शिक्षा : राजा ने अपने नवजात बालक के ग्रह आदि जानने के लिए राज-पुरोहित तथा ज्योतिषियों को बुलाया। उन्होंने भली प्रकार जांच-पड़ताल करने के पश्चात् राजा को बताया, कि यह बालक बड़ा तेजस्वी, ईश्वर-भक्त, विचारशील, सर्वगुण सम्पन्न होगा। कुछ ऐसा प्रतीत होता है, कि "जिस प्रकार यौगीराज महाराज के कर-कमलों से लगाया हुआ पौधा योगी लोग ही उसकी भविष्य-वृद्धि के लिए दे गए हैं, वैसे ही इस बालक की वृद्धि आपके हाथों से महलों में हो, यह आप के भाग्य में नहीं है"। ऐसा सुनते ही राजा-रानी बहुत दुःखी हुए और सोच-विचार में पढ़ गए, कि अब क्या किया जाए। ज्योतिषियों ने ही राजा को ढारस देते हुए कहा, कि वह लालन-पोषन, शिक्षा-प्रशिक्षण तथा सर्व प्रकार की वृद्धि के लिए बालक को महल के बाहिर किसी सुरक्षित, एकान्त एवं रमणीक स्थान में रख दें, जहां उसकी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यातमिक वृद्धि के सारे साधन प्रयाप्त रूप में प्राप्त हों। राजकुमार को हर प्रकार की शिक्षा प्रदान करने के लिए अच्छे-२ अध्यापिक नियुक्त किए गए। इन परिस्थितियों में बालक को घर के बाहिर सुरक्षित रखा गया। राजकुमार ने हर प्रकार की वृद्धि पाई - सुन्दरता, बुद्धिमत्ता तथा आध्यात्मिक शक्ति में अनूप हो गए। वह राज-पाठ, गृहस्थ तथा संसारिक कार्य चलाने में बड़े दक्ष हो गए। राजा ने उसको सर्वगुण सम्पन्न होते हुए पाकर, बालक का नाम पूर्ण रखा। बाद में, यही पूर्ण भक्त और फिर योगीराज बावा सहजनाथ जी कहलाऐ।

पूर्ण का महल में आना : ऐसे गुणवान सुपुत्र से राजा अधिक देर तक दूर नहीं रहना चाहता था। इसलिए उसने अपने सेनापति वीरसिंह को आज्ञा दी, कि वह राजकुमार को शाही ठाठ-बाठ से राजदरबार में ले आऐ ताकि प्रजा भी अपने राजकुमार को राजाओं जैसी सजधज तथा सम्मान के साथ राजदरबार में ले आऐ। सभी दरबारी तथा प्रजा राजकुमार के दर्शन पाकर अतीव प्रसन्न हुए। शुभ मुहूर्त में राजकुमार को महलों में प्रवेश कराया गया। उसे अपने पास पाकर रानी अच्छरां की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। उसने लोगों में शरीणी बांटी और जी भर कर दान दिया। महलों में हर व्यक्ति पूर्ण के दर्शण पाकर खुशी से फूला न समा रहा था। अपने आपको भाग्यवान पा रहा था और उसकी माता को धन्य-धन्य कहते बधाइयां दे रहे थे।

रानी लूनां

राजकुमार को सुन्दर, गुणवान देख तथा महल और सारे राज्य में प्रसन्नता की लहर देखकर रानी लूनां के हृदय पर सांप सा लौट गया। वह राजकुमार की सुन्दरता का ताव न सह सकी। अपने हृदय की भड़कना को पूरा करने की इच्छा से उसने अपना मायावी रूप धारण कर लिया। राजकुमार जब सेनापति वीरसिंह के साथ अपनी विमाता रानी लूनां को प्रणाम करने के लिए उसके महल में गया, रानी उसकी सुन्दरता देखते ही मोहित हो गई। दिल में पापाग्नि प्रज्वलित हो उठी। अपने भवन के किवाड़ बन्द कर दिए।

ज्यों ही राजकुमार पूर्ण, रानी के पांव छूने को बढ़ा, रानी पीछे हट गई और झट बोल उठी, कि मेरा-तुम्हारा सम्बन्ध मां-बेटे का नहीं है। यदि चाहो तो राजा को अभी मरवा डालती हूँ। चरित्रवान पूर्ण अपने-आपको झट सम्भाल कर बोला, कि आप मेरी माता जी हैं और माता का प्रेम पाने के लिए ही आपके पास उपस्थित हुआ हूँ। रानी ने उसे फुसलाने के लिए सब प्रयत्न किए, परन्तु सफलता न पाकर, उसे डराना-धमकाना आरम्भ करते हुए कहा, "जिन हाथों को आप मुझसे छुड़ा रहे हो और पांवों से परे हट रहे हो, इन हाथों तथा पांवों को राजा के द्वारा ही कटवा कर तुम्हें कुएँ में डलवा दूंगी। काफी वार्तालाप के बाद और बचाव का दूसरा कोई रास्ता न पाते हुए सर्वगुण सम्पन्न पूर्ण, रानी को धकेल कर, स्वयं खिड़की द्वारा छलांग लगा बाहिर निकल आया। सेनापति वीरसिंह, राजकुमार को खिड़की रास्ते भागते देखकर भांप गया कि भवन के अन्दर इसकी इच्छा के विरुद्ध ही कुछ हुआ होगा। बुद्धिमान सेनापति ने इस घटना के बारे में राजकुमार से कुछ न पूछा। वह चुपके से सम्मान सहित उसे अपने महल में छोड़ आया।

रानी लूनां ने पहले षड़यन्त्र में अपने-आपको असफल पाकर झट दूसरा माया-जाल रच लिया। कोप-भवन में चली गई। छोटी और अधिक सुन्दर होने के नाते लूनां राजा की पटरानी (मनचाही रानी) थी ही। राजा को जब उसके कोप-भवन में जाने का ज्ञान हुआ तो वह दुःखी दिल से भागा-२ वहाँ पहुँचा और देखा कि रानी हार-श्रृंगार उतारे, काले वस्त्र पहने, बाल बखेरे हुए, परेशान दशा में भूमि पर पड़ी हुई है। कारण जानने के लिए राजा और भी

बेताब हुआ और उसने गर्ज कर कहा – "हे प्रिय! झट बता कि तुम्हारी यह दुर्दशा किस दुष्ट के कारण हुई है। मैं उस दुष्ट को झट 'कारावास में दे दूँगा' या 'जीते जी उसकी खाल उतरवा दूँगा' या 'हाथ-पांव कटवा कर, कुएँ में फैंकवा दूँगा'।" ऐसा सुनकर, रानी मन ही मन प्रसन्न हुई कि अब राजा उसके माया-जाल में भली प्रकार फंस चुका है। अब वह पूर्ण को मरवाने का जाल रच सकती है। मन में ऐसा विचार कर, उस (रानी) ने राजा को बताया – "जब पूर्ण मेरे भवन में आया, वह मेरी सुन्दरता को देखकर बदनीयत हो गया। उसने मेरे पांव छुकर प्रणाम करने की बजाये मेरे भवन के किवाड बंद कर दिये और मुझे बेइज़्ज़त करना चाहा। यह दुर्दशा उसी घटना द्वारा हुई है। मैंने अपना सतीत्व बचाने के लिए और कोई रास्ता न पाकर चिल्लाना आरम्भ किया तो पूर्ण झट खिड़की से छलांग लगाकर बाहिर चला गया। ऐसे कुपूत के अपवित्र हाथ-पांव कटवा, उसको जीते जी कुएँ में फैंकवाना ही उचित है। रानी लूनां ने इस प्रकार षड़यन्त्र रचा और कहानी बनाई कि राजा को दृढ़ निश्चय हो गया कि इस घटना में पूर्ण ही दोषी है।

"विनाश काले विपरीत बुद्धि"

राजा ने इस कहानी की सच्चाई जानने के लिए कुछ भी न सोचा और न ही किसी दूसरे से सलाह-मशवरा किया। राजकुमार को दरबार में बुलाया गया। राजा ने पूर्ण को अपने पांव न छूने दिये और गर्ज कर बोला – "तूने अपनी मां के साथ जो दुष्ट व्यवहार किया है उसकी सजा फाँसी से कम नहीं है।" तब राजा

ने पूर्ण का शीघ्र कारावास में बंद करने की आज्ञा दी। सज़ा सुनते ही पूर्ण जी खुशी से हँस पड़े और बोले - "हे राजन्! पिता की आज्ञा का पालन करने में यदि मेरी जान जाए तो मुझ से अधिक भाग्यवान और कौन हो सकता है।"

यह सब कुछ सुन कर सेनापति वीरसिंह से न रहा गया। वह झट राजा के सामने खड़ा होकर बोला कि राजकुमार बिल्कुल निर्दोष है, राजकुमार को जेल नहीं जाने दूँगा। इसके लिए मैं अपने प्राणों की बाजी लगा दूँगा और राजा से कहा कि "यह रही नौकरी, मैं तो सत्य के पालन में सब कुछ अर्पण करूंगा।" इस पर राजा ने सिपाहियों से कहा कि वीरसिंह को भी कारावास में डाल दिया जाए। इस पर, सेनापति वीरसिंह ने अपनी तलवार निकाली और ललकार कर कहा - "यदि किसी ने राजकुमार पूर्ण को या मुझे हाथ लगाने की कोशिश की तो मैं उसका खून पी लूंगा।" इस पर पूर्ण ने सेनापति वीरसिंह को कहा - "आपको अपने स्वामी का कहना मानना चाहिए यही आपका धर्म है। राजद्रोह सबसे भारी अत्याचार है। सच और झूठ का निर्णय विधाता करेगा। इस पर, अनुशासन के पक्के सेनापति वीरसिंह चुप हो गये। तब उन दोनों को कारावास में डाल दिया गया।

राजा ने लूनां को सन्देश भेजा, कि कल ही पूर्ण को फाँसी चढ़ाया जाएगा। रानी ने सन्देशवाहक द्वारा राजा के नाम पत्र दिया, जिसमें लिखा था कि पूर्ण को फाँसी न चढ़ाया जाए। उसे केवल धमकाया जाए कि "तुम्हारे (पूर्ण) के हाथ-पांव कटवा कर तुम्हें किसी कुएँ में फैंकवा दिया जायेगा।" रानी ने दूसरी ओर, एक पत्र,

अपनी दासी द्वारा कारावास में पूर्ण को भेजा जिसमें लिखा था - "पूर्ण! तुम अभी भी मेरा (रानी) का कहना मान लो तो सब कुछ ठीक हो जायेगा।" पूर्ण ने इस पत्र के दासी के सामने टुकड़े-२ कर दिए और अपने पांव तले रौंदकर दासी को कहा कि "मेरी माता लूनां को जाकर कह दो, कि आपका पुत्र दुष्ट व्यवहार करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं है।" अगले ही दिन राजा ने घोषित किया कि पूर्ण के हाथ-पाँव कटवा कर उसे बाहिर के जंगल में कहीं दूर ले जाकर उसकी देह को गहरे कुएँ में डाला जाएगा।

यह सुनते ही रानी अच्छरां मूर्छित हो गई। दासियों के ढारस देने पर वह ज़रा होश में आई और राजा के पास पहुँची और बोली - "हे राजन्! आपके लाडले बेटे पूर्ण को मरवाने के लिए पक्का षड़यन्त्र रचा गया है। उसको सजा देने से पहले षड़यन्त्र की भली प्रकार जांच कर लेनी चाहिए ताकि सच्चाई का पता चल सके।" परन्तु 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि' वाला ही हिसाब हुआ। लूनां के षड़यन्त्र ने राजा की बुद्धि पर इतना गहरा असर किया था, कि बार-२ प्रार्थना करने पर भी रानी अच्छरां की एक न सुनी गई और धक्के मार कर बाहिर निकाल दिया गया।

हाथ-पांव कटवा कर, पूर्ण की देह को कुएं में फैंकवाना

राजा और रानी लूनां की आज्ञानुसार, बधिक राजकुमार पूर्ण को जंगल से बहुत दूर कुएँ के पास ले गए। वह राजकुमार को कहने लगे कि आपका शरीर इतना सुन्दर, कोमल और स्नेहयुक्त है कि इसे वध करने को हम बिल्कुल तैयार नहीं है और न ही इस दुष्टता के लिए हमारा हाथ उठ सकता है। अच्छा यही है कि आप और हम इस देश को छोड़ कर कहीं दूर भाग जाऐं। इस प्रकार आप भी बच जाएंगे और हम भी इस अत्याचार से रुक सकेंगे और राजा को भी कुछ पता नहीं चलेगा। इस पर, राजकुमार ने उन्हें शिक्षा दी कि "तुम्हें अपने स्वामी का आदेश मानना चाहिए। यही तुम्हारा धर्म है। राजा की आज्ञा भंग करने वाला नौकर बड़ा पाप का भागी होता है।" तब बधिकों ने उन्हें कहा - "महाराज! यह दुष्कार्य हम से नहीं हो सकता है। इस पर राजकुमार ने कहा "मैं आपकी आंखों पर कस कर पट्टी बांध देता हूँ और पट्टी बांधे हुए ही आप यह कार्य कर लेना और वापिस जाकर राजा और रानी लूनां को कह देना कि उनका बेटा पूर्ण हँसते हुए और कृतज्ञता प्रकट करते हुए उनसे जुदा हो रहा है। उसको इसी में खुशी है, कि उनकी (राजा-रानी) मनोकामना पूर्ण हो। पूर्ण ने दोनों वाधिकों की आंखों पर पट्टी बांधी और कुएं की मेंढ पर अपने दोनों हाथ रख दिए और अपनी सहायता से एक से अपने दोनों हाथ कटवा लिए तथा इसी प्रकार दूसरे से पांव कटवा लिए। तब वधिकों ने अपनी पट्टियां खोली और देखा कि

राजकुमार पूर्ण हँस रहे थे जबकि उनके हाथ-पांव अलग पड़े तड़प रहे थे।

यह देख कर वधिकों ने सहम कर कहा – "यह कुआँ बहुत गहरा है। यदि हम फैंकेगे तो आपको सख्त चोटें लगेगी। हम ऐसा करने का तैयार नहीं।" इस पर, राजकुमार ने सोचा कि यदि वधिकों ने राजा की आज्ञा का पालन न किया तो उन्हें फाँसी के तख्ते पर चढ़ाया जायेगा। बड़े सोच-विचार के पश्चात् उन्होंने अपने इष्ट-देव योगीराज श्री० श्री० महागुरु गोरखनाथ जी का यूँ ही स्मरण किया कुएँ का पानी तुरन्त ही ऊपर तक चढ़ आया और राजकुमार स्वयं अपने आप को घसीटते-२ कुएँ के पानी में चले गये। जैसे ही वह पानी में गये, पानी फिर नीचे अपनी जगह पर चला गया। यह कुआं बाद में 'पूर्ण का कुआँ' कहलाया। तब वधिक पूर्ण के हाथ-पाँव ले कर राजा के पास चले गये। राजा ने उन्हें आज्ञा दी, कि इन्हें रानी लूनां के हवाले कर दिया जाए। जब वधिक, रानी लूनां के पास पूर्ण के हाथ-पांव लेकर पहुंचे तो उसने उन्हें पूछा – "क्या पूर्ण हाथ-पांव कटवाने के समय रोया था?" इस पर, वधिकों ने उत्तर दिया कि "रोने की अपेक्षा वह तो हँस रहा था और कुएँ का जल उन्हें लेने के लिए स्वयं ऊपर आया था।" यह सुन कर रानी को पछतावा होने लगा और उसने पूर्ण के हाथ-पांव अपनी अल्मारी में रख दिए। इस वाक्य की खबर शीघ्र ही सारी नगरी, बल्कि सारी राजधानी में फैल गई। जिस-२ को भी सूचना मिली वही शोक और पश्चाताप करने लगा। इस प्रकार सारी राजधानी में हाहाकार मच गई। राज-महलों और राज-दरबार में

चीख-व-पुकार का राज्य स्थापित हो गया। जब सेनापति वीरसिंह को यह सूचना मिली तो उसने राजा को सन्देश में लिख भेजा कि किस प्रकार महल में घटना हुई थी। राजा पागल सा हो गया था। उसने सेनापति वीरसिंह को कारावास से निकाल दिया। महलों में दयनीय अवस्था हो गई। सारी प्रजा रानी लूनां को कोस रही थी। तथा राजा को नीच और कठोर हृदय बता रही थी।

पूर्ण का पुर्नजन्म तथा योगी बनना

पूर्ण ने कुएँ की थाह पर पहुँच कर बड़े आत्म-भाव से परमगुरु महासमर्थ श्री० श्री० गोरखनाथ जी का सच्ची श्रद्धा से स्मरण करना शुरू कर दिया। थोड़ी देर के पश्चात् पूर्ण की भक्ति से गुरु गोरखनाथ जी का आसन डोल पड़ा। इस पर उन्होंने अन्तरध्यान होकर देखा - पूर्ण कुएँ में पड़ा उनका स्मरण कर रहा है। उसी दिन वह देशाटन के लिए अपने चेलों के साथ टिल्ला से निकल पड़े और स्यालकोट के पास एक जंगल में (पूर्ण के कुएँ के पास) डेरे डाल दिये। दूसरी सुबह गुरुदेव जी ने अपने एक चेले को स्नान के लिए जल लेने भेजा। उसने कुएँ पर जाकर जब रस्सी के साथ कमण्डल कुएँ में डाला, पूर्ण ने कमण्डल को छोड़ रस्सी को मुख में दबा लिया। जब चेला कमण्डल को खींचने लगा वह घबरा गया। उसने रस्सी को कुएँ के मैंढ के साथ बांधा और स्वयं गुरु गोरखनाथ जी के पास गया और बोला, "नाथ जी, पता नहीं कुएँ में कौन है। जिसने कमण्डल को पकड़ रखा है, आ

स्वयं ही पता ले कि वह कौन है।" जब गुरु जी स्वयं कुएँ के पास गऐ और बोले, "तुम कौन हो? तुम भूत हो, जिन्न हो या किसी के द्वारा सताये गये हो। तुम्हारे माता-पिता का क्या नाम है?" जब पूर्ण को मालूम हुआ कि गुरु गोरखनाथ जी स्वयं कुएं पर आऐ हैं तो उसने कमण्डल को छोड़ दिया तथा प्रेम से बोले, "गुरु जी, न मैं कोई भूत हूँ और न कोई जिन्न हूँ और न ही कोई और बला हूँ। मेरा नाम पूर्ण है और राजा सालवाहन मेरे पिता और रानी अच्छरां मेरी माता है और राजा की आज्ञा के कारण इस कुएँ में पड़ा हूँ और मेरे हाथ-पांव काट दिए गये हैं और रानी लूनां के पास पड़ें हैं।" तब गुरु गोरखनाथ जी ने ऐसी शक्ति छोड़ी, जिससे रानी लूनां के महलों में से हाथ-पाँव आ गये और सीधे कुएं में जाकर पूर्ण को लग गये। गुरु गोरखनाथ जी ने पूर्ण से पूछा, "कि क्या उसे हाथ-पाँव मिल गये हैं?" पूर्ण ने उत्तर दिया कि, "महाराज! मुझे मिल गए हैं।" उस समय गोरखनाथ जी ने कुएँ में कच्चे धागे को डाला और बोले, "पूर्ण तुम इस धागे को पकड़ कर कुएँ से बाहिर आ जाओ और चेलों को कहा कि धागे को धीरे-२ खींचों। पूर्ण ने उस धागे को पकड़ लिया। शुक्रवार के दिन गुरु गोरखनाथ जी के चेलों ने पूर्ण को बाहर निकाला। गोरखनाथ जी ने पूर्ण का सुन्दर चेहरा देखकर कहा, "बेटा, तुम अपने माँ-बाप की इकलौती सन्तान हो, तुम जाओ और राजपाठ चलाने में राजा का हाथ बटाओ। परन्तु राजकुमार पूर्ण ने रोते हुए उत्तर दिया, "गुरु जी, अब मैं राज्य में नहीं जा सकता, क्योंकि अगर मैं खोटा होता तो मैं अपनी सोतेली माँ लूनां का कहना मान लेता और इस चन्दन जैसी देह को कुएं में क्यों

फैंकवाता। महाराज! यह आप की कृपा थी कि मैं संसारिक जाल से एक बार बड़ी कठिनाई से बच सका हूँ। मैं आप ही का बेटा हूँ फिर आप मुझे क्यों दोबारा मायाजाल में फंसा रहें हैं। कृपा मुझे अपनी शरण में रखें ताकि मैं एक तो मनुष्य जीवन के लक्ष्य अर्थात परमानन्द को पा सकूँ तथा दूसरे, आपकी जनता की सेवा कर सकूँ। आप मुझे अपना चेला बना लें। इस पर गुरुजी साधुओं की टोली और पूर्ण को लेकर टिल्ला आ गये। वहाँ आ कर गुरु गोरखनाथ जी ने राजकुमार पूर्ण के सिर को मुंड़वा दिया और पूर्ण को पंचरत्नी का स्नान कराया। इसके बाद गुरु जी ने पूर्ण को फिर अपने पास बुला लिया और तब कपिलापीर ने पूर्ण के कान चीर दिये और गुरु जी ने काठ की मुद्राऐं पूर्ण के कानों में डाल दी। तथा पूर्ण के सारे शरीर पर अपनी तपस्या के धूने की विभूती मल दी। इस सब के बाद गुरु जी ने उसे नाद और सारी सृष्टि तथा राजयोग का पूर्ण ज्ञान प्रदान किया और धूना रमा कर तपस्या करने का ढ़ंग बताया तब उनका नाम पूर्ण से बदल कर बावा सहजनाथ रखा।

सहजनाथ जी की परीक्षा

एक दिन गुरु जी ने सहजनाथ जी से कहा, "बेटा, आज तुम साथ वाली आबादी से भिक्षा माँग लाओ। सहजनाथ जी भिक्षा के लिए निकल पड़े। मांगते-२ वह रानी सुन्दरां के महल के पास पहुँचे तो बाहिर खड़े पहरेदारों ने योगी को खबरदार किया कि वह

महलों में भिक्षा माँगने न जाए क्योंकि उससे पहले जितने भी योगी आए हैं उन सब की मुद्राएं रानी ने उतरवा ली है। परन्तु सहजनाथ जी न रुके और अन्दर जाकर आलक्ष जगा दी। जब रानी सुन्दरां ने आवाज़ सुनी तो उस ने दासी को भिक्षा देने भेजा। जैसे ही दासी सहजनाथ जी को भिक्षा देने लगी तो उन्होंने भिक्षा लेने से इनकार कर दिया और बोले, "दासी, मैं तुम से भिक्षा नहीं लूंगा। मैं तो रानी सुन्दरां से ही भिक्षा लूंगा।" इस पर दासी रानी के पास गई और बोली, "रानी अपनी जिस सुन्दरता पर तुझे घमण्ड है, उस सूरत से भी योगी अधिक सुन्दर है। वह मुझ से भिक्षा नहीं लेता। इस पर रानी सुन्दरां स्वयं हीरे-मोती एक थाल में भर कर ले आई और जैसे ही सहजनाथ जी को देने लगी तो वह बोले, "मुझे हीरे-मोती नहीं चाहिए, मुझे आटा चाहिए।" परन्तु उस समय सहजनाथ जी के सौंदर्य में खो गई थी। जैसे ही सहजनाथ जी ने इतनी बात कही तो रानी को होश आया और बोली, "हे योगी! तुम किसी राजा के बेटे दिखाई देते हो। तुम्हारे माँ-बाप का नाम क्या है? आओ तुम यहाँ के राजा बन जाओ और मैं तुम्हारी रानी बन जाती हूँ।" सहजनाथ जी मधुर वाणी में बोले, "राजा सालवाहन मेरे पिता हैं और रानी अच्छरां मेरी माता है। अगर मुझे राज्य ही करना होता तो मैं अपनी सौतली-माता लूनां का कहना मान लेता। अगर आप ने भिक्षा देनी है तो दो नहीं तो हम चलते भले।" इस पर रानी ने कहा कि वहां कितने योगी हैं क्योंकि उसने सभी को खाना खिलाना है। तब सहजनाथ जी ने कहा, "टिल्ला में एक लाख योगी हैं, दो लाख भोगी हैं और तीन लाख दूध-आहारी हैं। तब रानी सुन्दरां भण्डारे का सारा सामान लेकर सहजनाथ जी के

साथ टिल्ला में गई। उसने वहां देखा कि गुरु गोरखनाथ जी समाधि लगाए बैठे हैं। इस पर, सहजनाथ जी अपने धूने पर बैठ गये। परन्तु रानी सुन्दरां ने गुरु जी के धूने को भी तब तक जागृत रखा जब तक गुरु जी समाधि से न उठे। लेकिन दूसरी ओर सभी साधुओं को खाना वगैरा खिला दिया गया। जैसे ही गुरु गोरखनाथ जी ने समाधि तोड़ी, तो सामने रानी सुन्दरां को पाया और रानी से पूछा कि वह कब आई। रानी ने उत्तर दिया, "जब से आप समाधि लगाए हैं।" यह बात सुन कर गुरु जी प्रसन्न हो गये और बोले, "रानी क्या कारण है कि आप यहाँ पर आई हैं इच्छा बतायें, तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। इस पर रानी ने कहा, "गुरुदेव! आपकी दया से सब कुछ ठीक है। आप का एक योगी भिक्षा लेने आया था। तो मैं सभी को भोजन खिलाने आई हूँ। अब सभी भोजन कर चुके हैं और अब मुझे आपका वही चेला चाहिए।" रानी की बात सुनते गुरु श्री० गोरखनाथ जी ने सहजनाथ जी को रानी सुन्दरां के साथ जाने की आज्ञा दे दी। इस पर, सहजनाथ जी ने गुरु जी से कहा, "गुरु जी! एक विपत्ति से निकाल कर दूसरी विपत्ति में क्यो डाल रहे हो?" इस पर गुरु जी ने कहा, "जाओ बेटा! आज्ञा को पूरा करो, यही तो तुम्हारी परीक्षा है।" इतनी बात सुनते ही सहजनाथ जी रानी सुन्दरां के साथ चल पड़े। जैसे ही सहजनाथ रानी सुन्दरां के महल पर पहुँचे तो वह महल के द्वार पर खड़े हो गये। इस पर रानी ने कहा, "अन्दर आओ।" परन्तु सहजनाथ जी ने कहा, "रानी, तूने सिर्फ मुझे माँगा है। जब तक मेरे साथ योग-बान हैं तब तक मैं अन्दर नहीं आ सकता।" इस पर रानी ने कहा, "मेरी आज्ञा पूरी करो और मुझे प्रसन्न करो।" इस पर

सहजनाथ जी ने कहा कि आओ, हम बाग में आंख-मिचौली खेलें। पहले तुम छिपोगी और मैं ढूंढूंगा और बाद में मैं छिपूंगा और तुम ढूंढोगी। इस पर पहले रानी छिपी और सहजनाथ ने ढूंढ लिया। फिर सहजनाथ जी छिपे और रानी अपनी बारी को निभाने के लिए महल में चली गई, ताकि वह सब कुछ देख सके। इसी समय के अन्दर सहजनाथ जी ने अपना योग डंडा तथा अपना सामान लिया और टिल्ला को चले गये। जब रानी ने देख़ा कि वह जा रहे हैं तो रानी ने पहले आवाज़ लगाई और बाद में स्वयं महल से कूद पड़ी और गिर कर मर गई।

थोपे गये कलंक का खुलना

जैसे ही सहजनाथ जी टिल्ला पहुंचे तो उन्होंने गोरखनाथ जी को प्रणाम किया और वह टिल्ला में छः मास तक रहे। छः मास बीत जाने के बाद महागुरु गोरखनाथ जी ने अपने सभी चेलों को पूछा, "किसी को देशाट्न के लिए बाहिर तो नहीं जाना है? इस पर सहजनाथ जी ने कहा, "गुरुदेव मेरे माथे पर एक कलंक लगा है उसे मिटाने के लिए मुझे अपने गाँव जाना है।" इतनी बात सुनते ही गुरु जी ने सहजनाथ जी को देशाट्न की आज्ञा दे दी और साथ ही समझाया कि छोटी लड़कियों को वह बहिनें कहे और बढ़ों को माई या माता कहे। आज्ञा लेकर सहज़नाथ जी सीधे स्यालकोट पहुँचे। वहां पर सहजनाथ जी सारा शहर घूमे। डेरा जमाने के लिये कोई जगह न मिली। अन्त में वह वर्षों से सूखे

एक बाग में पहुंचे (यह बाग वह था जो राजा सालवाहन ने अपने पुत्र पूर्ण की याद में लगवाया था) और वहां पर समाधि लगा दी। संध्या के समय नाथ जी ने नाद की पूजा की और टिल्ले में पता दिया कि "वह अपने स्थान पर पहुँच गए हैं और वहां धूने को जागृत कर दिया है।" धूने के जागृत होते ही माली की आँखों में रोशनी आ गई, जो कई वर्ष से अन्धा था। जैसे माली को दिखने लगा तो वह सीधा बाग में आया और देखा कि बाग हरा-भरा हो गया है और हर प्रकार के फल-फूल लग गए हैं। माली ने सारे बाग में चक्कर लगाया तो देखा कि वहाँ एक साधू (सहजनाथ) समाधि लगाए बैठा है। साधू को देखते ही माली ने प्रणाम किया। सुबह-२ उठते ही माली ने बाग से फल और फूल तोड़ कर टोकरे में भरे और सीधा राजा के दरबार में ले गया तथा टोकरे को राजा के सामने रखा। राजा ने टोकरे में फल तथा फूल देखते ही माली से पूछा, "हे माली! यह फल और फूल किस बाग के हैं और तुम तो अन्धे थे?" इस पर माली ने उत्तर दिया, "हे राजन! यह फल-फूल उसी बाग के हैं जो राजकुमार पूर्ण के जुदा होने पर सूख गया था और उसी बाग में एक साधू आया है, उसकी महिमा द्वारा ही बाग हरा-भरा हो गया है और मुझे भी सब-कुछ दिखने लगा है।" इतनी बात सुनते ही राजा महल की छत पर चढ़ा और जैसे ही उसने वह बाग देखा, जो बारह वर्ष से सूखा पड़ा था, वैसे ही राजा को अपने पुत्र पूर्ण की याद आ गई और उसकी आँखों में आँसू आ गये। राजा ने आँसू पोंछे और महल में आया तथा माली को कहा, "यह फल-फूलों का टोकरा रानी लूनां के पास ले जाओ।" जैसे ही माली ने वह टोकरा रानी लूनां के सामने रखा तो

रानी ने पूछा, “यह फल-फूल किस बाग के हैं और तुम तो अन्धे थे?” इस पर माली ने रानी लूनां को भी कहा, यह फल-फूल उसी बाग के हैं जो बारह वर्ष से सूखा था और उस बाग में एक साधू आया है, उसी की महिमा से बाग भी हरा-भरा हो गया है और मुझे भी सब कुछ दिखने लगा है।” इस पर रानी ने फल-फूल रख लिए और सीधी राजा के पास गई और बोली, “राजन! चलो, हम भी योगी की सेवा करें, शायद वह हमें सन्तान दे दे।” इस पर, राजा सालवाहन तथा रानी लूनां दोनों तैयार होकर बाग में चले गए। जैसे ही सहजनाथ जी ने देखा कि उनके माता-पिता आ रहे हैं तो उन्होंने दोनों को मन ही मन प्रणाम किया। जैसे ही राजा तथा रानी नाथ जी को प्रणाम करने के लिए झुके वैसे ही सहजनाथ जी ने उनके हाथ पकड़ लिए और उन्हें आदर के साथ बिठाया और पूछा, “कैसे हो राजन?” राजा ने उत्तर दिया, “सब ठीक है।” फिर सहजनाथ जी ने पूछा, “राजपाठ कैसे चल रहा है और आप कैसे आए हैं?” इस पर राजा ने उत्तर दिया, “महाराज! आपकी दया से राजपाठ ठीक चल रहा है परन्तु घर में सन्तान नहीं है।” सहजनाथ जी ने कहा, “राजन! आप झूठ बोल रहे हैं। आपके घर एक बेटा था जिसका नाम पूर्ण था” इस पर राजा ने उत्तर दिया, “नाथ जी! पूर्ण ने मेरी इस रानी की इज़्ज़त लूटने की सोची, इसी कारण मैंने उसके हाथ-पाँव कटवा कर कुएँ में फैंकवा दिया।” इतनी बात सुनते ही सहजनाथ जी ने रानी लूनां से कहा, “रानी, तो तुम अब सन्तान चाहती हो?” रानी ने उत्तर दिया, “हां महाराज! मैं सन्तान चाहती हूँ।” सहजनाथ जी ने कहा, “रानी, सन्तान प्राप्ति के लिए तुम्हें सच बोलना होगा।”

रानी ने कहा, "ठीक है महाराज! मैं सच बोलूंगी।" इस पर सहजनाथ जी ने रानी से पूछा, "रानी! पूर्ण ने तेरे साथ कैसा व्यवहार किया था।?" इस प्रश्न को सुनते ही रानी घबरा गई कि यदि उसने सच बोला तो राजा उसे मार देगा और अगर झूठ बोला तो सन्तान नहीं मिलेगी। फिर भी रानी ने दिल पर पत्थर रखा और कहा, "पूर्ण तो निर्दोष था परन्तु मैंने स्वार्थवश होकर उसको मरवा दिया।" राजा सालवाहन ने रानी लूनां से पूछा, "रानी! क्या यह सच है?" "हाँ महाराज!" रानी ने उत्तर दिया। इतनी बात सुनते ही राजा ने क्रोध से अपनी कटार को हाथ में ले लिया, परन्तु सहजनाथ जी ने राजा का हाथ रोक लिया। बाद में राजा ने रानी को कहा, "हे पापिन! तूने मेरे साथ किस युग का बदला लिया है?" लेकिन तब तक रानी लूनां चुप थी। बावा सहजनाथ जी ने अपने शक्तिमान गुरु से आराधना करके रानी लूनां के यहां भी एक पुत्र प्रदान किया जो राजकुमार रसालू के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

रानी लूनां को सहजनाथ जी ने कहा, "जाओ तुम्हारे घर बेटा होगा और उसका नाम रसालू होगा और वह बड़ा परोपकारी होगा। परन्तु वह बारह वर्ष ही घर पर रहेगा और उसके पश्चात् तुम ऐसे तड़पोगी जैसे रानी अच्छरां।" जब माली को पता चला कि राजकुमार पूर्ण सच्चा है तो उसने सारे राज्य में शोर मचा दिया कि राजकुमार पूर्ण निर्दोष था और रानी लूनां झूठी है। तभी रानी अच्छरां को दासी ने उसको यह बात बताई, तो वह खुशी से बाग-२ हो उठी। तभी राजा ने सन्देशा भेजा कि रानी अच्छरां को बाग में लाया जाये। इस पर रानी अच्छरां को पालकी में बाग के

दरवाज़े तक पहुँचा दिया। तभी रानी अच्छरां ने अपनी छड़ी सम्भाली और दरवाज़े को पार करने लगी। परन्तु वहीं पर गिर पड़ी क्योंकि वह कई वर्षो से रो-२ कर अन्धी हो चुकी थी। तभी सहजनाथ जी अपने आसन से उठे और माता अच्छरां के पास आ गये। पहले सहजनाथ जी ने अपनी माता के चरणों को छुआ और बाद में उनको उठा लिया और अपने सामने बिठा लिया। रानी अच्छरां ने सहजनाथ जी को कहा, "नाथ जी, आज बारह वर्ष के बाद मेरे पैरों को किसी ने हाथ लगाए हैं जो एक बार तब लगाये गये थे जबकि पूर्ण को घर से बाहिर निकाला था। इससे कुछ ऐसा लगता है जैसे तुम मेरे ही बेटे हो। परन्तु सहजनाथ जी ने कहा, "ऐसा कैसे हो सकता है।" तभी राजा ने रानी अच्छरां से अपनी गल्तियों तथा दी गई यात्नाओं के लिए क्षमा मांगी। रानी ने सहजनाथ जी से कहा, नाथ जी, जैसे आप ने माली की आँखों को ठीक किया है वैसे ही मेरी आँखों को भी ठीक करो।" इस पर सहजनाथ जी ने अपने लोटे से जल लिया और रानी अच्छरां की आँखों पर छिड़क दिया। झट रानी अच्छरां को सभी कुछ दिखने लगा। तभी रानी अच्छरां ने सहजनाथ जी को पहचान लिया कि वह उसी का पुत्र पूर्ण है, तो रानी ने दोबारा सहजनाथ जी से कहा, "नाथ जी, अब मुझे यकीनन ऐसा जान पड़ता है कि तुम मेरे ही बेटे पूर्ण हो। नाथ, तुम ही मेरे बेटे हो क्योंकि अब भी मैं वह ज्योति तेरे मस्तक पर देख रही हूँ जो कि बारह वर्ष पहले अपने बेटे पूर्ण के मस्तक पर देखी थी।" तभी सहजनाथ जी ने रानी अच्छरां को बताया, "हां माता, मैं ही तेरा बेटा पूर्ण हूँ।" इस पर रानी अच्छरां के आँसू निकल आये। राजा ने कहा, "बेटा

पूर्ण!" सहजनाथ जी ने उत्तर दिया, "हां पिता जी।" रानी लूनां ने कहा, "बेटा पूर्ण।" "हां माता जी।" तभी सभी की आँखों में आँसू आ गये और रोने लगे। इसके बाद सहजनाथ जी राजा के महलों में भिक्षा लेने के लिए गये। वहां पर रानी अच्छरां ने बड़ा विलाप किया और उसने कहा, "बेटा मेरी आशाएं तो पूर्ण न हुई। सहजनाथ जी ने पूछा, "कौन सी आशाएं रह गई है माता जी।" तब रानी ने कहा, "बेटा तेरे इन कानों में मैंने सुच्चे मोती डालने थे तूने काठ की मुद्राएं डाल ली हैं। इस तेरे सिर पर मैंने ताज रखना था, तूने जटाएं बढ़ा ली हैं, मैंने तेरी इस देह को इत्र लगाना था, तूने इस पर खाक छाप रखी है। आज एक राजा का पुत्र तथा राज्य का अधिकारी भिक्षा लेने आया है। यह देख बहुत दुःख होता है। तब सहजनाथ जी बोले, "आप भिक्षा दो, मुझे गुरु के पास जाना है।" इतनी बात सुनते ही रानी अच्छरां ने सहजनाथ जी को भिक्षा दी और आँसू बहाते हुए विदा किया। तब सहजनाथ जी बोले, "राजा-रानी तथा सारी प्रजा, तुम्हारी नगरी सुखी रहे। अब हम योगी चलते हैं। इतनी बात कहके सहजनाथ जी धीरे-२ रमते-२ बदबाल में पहुँचे।

स्यालकोट छोड़ कर बावा सहजनाथ जी धीरे-२ रमते-२ बदवाल गांव (सिद्ध सवांखा गांव के निकट तहसील साम्बा) में पहुँचे। बदवाल के लोग योगियों को नहीं मानते थे और सदा उनकी निरादरी करके उन्हें गांव से निकाल देते थे और वह लोग चाड़क जाति के थे। बदवाल में पहुँच कर सहजनाथ जी ने एक कुएँ के पास 'अल्ख' जगाई और बोले, "कोई माता ऐसी है जो मुझे दूध

पिलाये?" कुएँ पर तीन मर्द नहा रहे थे और औरतें पानी भर रही थीं। उनमें से एक औरत बोली, "नाथ, हम चाड़क होते हैं। हम किसी योगी को नहीं मानते। तुम तो दूध मांगते हो, हम तो पानी भी नहीं देते।" इस पर सहजनाथ जी वापस चल दिये। तब उन लोगों को कुछ मज़ाक करने की सूझी और उन्होंने सहजनाथ जी को बुलाया और बोले, "इस गांव में सभी निर्धन हैं। यहाँ पर किसी के घर में गाय नहीं है। हाँ, यहाँ पर एक ब्राह्मण है, उसका नाम जियो है और उसकी पत्नी का नाम लक्ष्मी देवी है। उनके घर में गाय है, इसलिए आप उन्हीं के घर जायें, दूध वहाँ पर ही मिलेगा।" तब सहजनाथ जी बोले, "उनके घर का रास्ता बता दो।" इस पर, एक औरत बोली, "नाथ जी, उनके घर को यही रास्ता जाता है। उनके आंगन में एक सूखा हुआ पीपल का पेड़ है और उनके घर पर छत भी नहीं है।" तब सहजनाथ जी ने जान लिया कि उनके साथ मज़ाक किया गया है और वह उनके बताए गये रास्ते से जियो ब्राह्मण के घर पहुँचे और "अलख" जगाई तथा बोले, "माई! मुझे दूध पिलाओ। इस पर माई बोली, "नाथ जी, मेरे घर में न कोई गाय है, न कोई बछिया है और न ही कोई अन्य पशु है। मैं आपको दूध कहाँ से पिलाऊं?" इस पर, सहजनाथ जी ने अपनी झोली पीपल के साथ लगा दी। उन्होंने लकड़ियां इकट्ठी की और धूने को जागृत किया तथा अपने योग बल का आवाहन किया। धूने के जागृत होते ही पीपल हरा-भरा हो गया। जब माता लक्ष्मी ने पीपल के पत्तों के खड़खड़ाने की आवाज़ सुनी और दरवाज़े से झांक कर देखा कि पीपल हरा-भरा हो गया है तो उसने मन में विचार किया, कि जो साधू सूखे हुए

वृक्ष को हरा-भरा कर सकता है वह मेरा कष्ट भी दूर करेगा। धूने को जागृत करके सहजनाथ जी ने कहा, "माई, तुम अन्दर बैठ कर ही बातें कर रही हो, बाहिर तो आकर दर्शन दो।" इस पर लक्ष्मी ने कहा, "नाथ जी, मैं बाहिर कैसे आऊं हमारे पास एक ही चादर है, वह मेरा पति ले गया है।" इतनी बात सुनते ही सहजनाथ जी ने एक सवा गज परने को अन्दर फैंका। परन्तु लक्ष्मी माई बोली, "नाथ जी, यह सवा गज का परना मेरे शरीर को ढक नहीं सकता।" इस पर सहजनाथ जी बोले, "माई, श्री० गोरखनाथ का नाम लेकर इस परने को ले लो।" तब लक्ष्मी माई ने श्री० गोरखनाथ जी के चरणों में आराधना की, तो वही परना उसके शरीर पर दोहरा आया। अब लक्ष्मी ने सहजनाथ जी को भिक्षा देने के लिये सारे बर्तनों में देखा, परन्तु कुछ नहीं मिला। आखिर में लक्ष्मी ने चक्की के पुड़ उठाये और गाला निकाल कर ले आई। जैसे ही सहजनाथ जी को देने लगी, तो सहजनाथ जी बोले, "माई, मुझे हीरे-मोती नहीं चाहिए, मुझे केवल दूध चाहिए।" तब लक्ष्मी ने हैरान हो कर देखा कि सचमुच हीरे-मोती थे और बोली, "नाथ जी, आपको पहले ही सारी स्थिति बता चुकी हूँ। तब सहजनाथ जी ने कहा, "माई, तुम इतना बता दो कि गाँव का चौना (पशुओं का झुंड) किस ओर से आता है?" इस पर, लक्ष्मी ने चौने के आने का रास्ता बता दिया। तब सहजनाथ जी लक्ष्मी से बोले, "माता, तुम धूने पर बैठो मैं अभी आया।" ऐसा कह कर सहजनाथ जी रास्ते में एक स्थान पर खड़े हो गये। तथा जैसे ही चौना आया, तो उन्होंने एक लीला रची जितनी चौने में गाएँ थी, सभी के रंग जल के छींटे मार कर बदल दिये और सारे का सारा

चौना लक्ष्मी के घर आ गया। अब लक्ष्मी ने सारी गाइयों का दूध धोया और सहजनाथ जी को पिलाने लगी। जब सहजनाथ जी दूध पीकर सन्तुष्ट हो गये, तो उन्होंने लक्ष्मी को कहा, "माई, अब बस करो।" परन्तु लक्ष्मी ने कहा, "नाथ, अभी बहुत दूध बचा है।" इस पर सहजनाथ जी ने कहा, "माई, जो दूध बचा है वह मेरे धूने में डाल दो।" तब लक्ष्मी ने सारे का सारा दूध धूने में डाल दिया। इसी कारण वहां की विभूति दूध की तरह अब भी सफेद है। तब सहजनाथ जी ने कहा, "माई अब तुम अपनी आँखें बन्द करो।" जैसे ही लक्ष्मी ने आँखें बन्द की, सहजनाथ जी ने अपने प्रताप से उस टूटी-फूटी झोंपड़ी को उड़ा कर, वहाँ पर एक महल खड़ा कर दिया और लक्ष्मी को आँखें खोलने को कहा। जैसे लक्ष्मी ने आँखें खोली, वैसे खुशी में झूम उठी और सहजनाथ जी के चरणों में सिर झुकाया। दूसरी ओर जियो ब्राह्मण को यहाँ पर एक-दो मुट्ठी आटा मिलता था, वहाँ उस दिन बहुत आटा मिला और यूँ ही वह अपने गाँव में पहुँचा अपने पड़ोसियों को गालियाँ निकालने लगा और घर को ढूँढने लगा क्योंकि अब उसकी झोंपड़ी की जगह एक महल खड़ा था और सूखे पीपल की जगह एक हरा-भरा पीपल खड़ा था। अन्त में उसने बच्चों से पूछा, "बच्चों, तुमने लक्ष्मी माँ को तो नहीं देखा?" इस पर बच्चों ने उत्तर दिया, "नाना, तुम पागल तो नहीं हो गए। वह जो किला है वह तुम्हारा है और ऐसा साधू की कृपा के कारण हुआ है।" तब जियो जब किले के दरवाज़े पर पहुंचा तो लक्ष्मी ने कहा, "पति जी, पहले उधर चलो।" तब लक्ष्मी और जियो ब्राह्मण ने सहजनाथ जी को प्रणाम किया। दूसरी ओर चाड़कों ने (जोकि बदवाल के रहने वाले

थे) जाकर गोरखनाथ जी को कहा, "नाथ जी, लक्ष्मी ने आपका एक योगी घर पर जवाई बना लिया है।" इतनी बात सुनते ही गोरखनाथ जी टिल्ला से अपने चेलों के साथ बदवाल में आ गये, चूंकि वह इतना जानते थे, कि सहजनाथ इतना बुरा कार्य नहीं कर सकता और बदवाल पहुँचते ही गाँव के बाहिर डेरे डाल दिए और अपने चेलों का आज्ञा दी कि जाओ और जियो और लक्ष्मी का बाँध कर ले आओ। ज्यों ही जियो और लक्ष्मी को गोरखनाथ जी के सामने लाया गया, तो उन्होंने जियो से प्रश्न किया, "हे ब्राह्मण, हमने सुना है, कि तुमने मेरे चेले को अपने घर में जवाई बना लिया है और घर का सारा काम उसी से करवाते हो।" इस पर जियो ने उत्तर दिया, "नाथ जी, हमारे घर तो कोई बेटा या बेटी नहीं, हम उसे कैसे जवाई रख सकते हैं और जो वह काम करता है वह अपने ही आप करता है। इतनी बात सुनते ही उन्होंने कपिलापीर को आज्ञा दी, "कपिलापीर! जांओ सहजनाथ को लेआओ तथा रास्ते में उसके तपोबल की जाँच करना।" कपिलापीर गुरु की आज्ञा पाते ही सहजनाथ जी के पास चले गये। जैसे ही वह सहजनाथ के पास पहुँचे, तो सहजनाथ जी ने कपिलापीर को निवेदन किया परन्तु कपिलापीर क्रोध से बोले, "तुम्हें आदेशादेश बताता हूँ।" सहजनाथ जी ने कहा, "क्या बात हो गई है जो आप इतने क्रोधित हो रहे हैं?" तब कपिलापीर बोले, "चलो, गुरु जी ने बुलाया है।" इतनी बात सुनते ही सहजनाथ जी कपिलापीर के साथ चल पड़े। रास्ते में कपिलापीर ने कहा, "तुम चलो और मैं आता हूँ।" इतना कह कर कपिलापीर एक झाड़ी में चला गया और शेर के रूप में बदल कर सहजनाथ जी के पीछे दौड़ा। जब

सहजनाथ जी को पता चला कि उसके पीछे शेर दहाड़ता हुआ आ रहा है तो सहजनाथ जी ने अपने बचाव के लिये एक दीवार पर हाथ रखा तथा उसको अपने तपोबल से शेर के पीछे लगा दिया। अब शेर भाग कर गुरु गोरखनाथ के पास पहुँचा परन्तु उसके पीछे-२ दीवार भी वहाँ पहुँच गई। परन्तु गोरखनाथ जी ने दीवार को रोक लिया और जब सहजनाथ जी गुरु गोरखनाथ के पास पहुँचे, तो उन्हें प्रणाम किया। तब गोरखनाथ जी ने सहजनाथ जी को कहा, "बेटा, इन चाड़कों ने तुम्हारी शिकायत की है कि तुम जियो के घर एक जवाई बन कर रह रहे हो, क्या यह बात सत्य है?" इस पर सहजनाथ जी ने कहा, "गुरुदेव, किसी ने आपसे झूठ कहा है। जियो तो मेरा धर्म का पिता और लक्ष्मी मेरी धर्म की माता है।" तब गोरखनाथ जी ने कहा, कि तुम ठीक कह रहे हो और इसका प्रमाण तुम दे चुके हो। अब तुम जो चाहो वही करो और अब मैं चलता हूँ। चाड़क सहजनाथ जी और गोरखनाथ जी का संवाद सुनते ही भाग गये। जब गोरखनाथ जी वहाँ से गये, तो सहजनाथ जी ने कहा, "अब इन चारों गांवों में योगी ही रहेंगे और चाड़क या ब्राह्मण कोई न रहेगा। केवल एक घर ही ब्राह्मण का होगा और वह है जियो ब्राह्मण का।" इतनी बात कह कर सहजनाथ जी ने 'आलक्ष' जगाई और कहा, "माई, हमें भिक्षा दो। अब यह नगरी सुखी रहे और हम चलते हैं।" इतनी बात कह कर सहजनाथ जी जांडी की ओर आए।

❖ ❖ ❖

जांडी तपोभूमि

जांडी पहुँचने पर उन्हें मालूम हुआ कि यहां महर्षि जमद ने काफी तपस्या की थी। तब बावा जी को विचार आया कि भी महर्षि जमदगनी की तपोभूमि (जांडी) में बैठ कर तपस्या क ऐसा विचार कर, उन्होंने जांडी के पास के एक सूखे जंगल जाकर अपना धूना रमा लिया। यह सांयकाल का समय था, बावा जी ने कुछ लकड़ियाँ तथा गोटे इकट्‌ठे कर धूना ज किया और नाद की पूजा की। जैसे ही नाथ जी के धूने ने ध छोड़ा, पल में सारे का सारा जंगल (जो कई वर्षो से सूखा था) हरा-भरा हो गया।

जांडी के राजा बलारदेव की आराधना

वहाँ जंगल में, एक वृक्ष पर एक जोड़ा तोता और मैना एक लकड़हारा यह सब लीला देख रहे थे। देव कृपा से उनके में विचार आया, कि यदि नाथ (बावा सहजनाथ) इस सूखे ज को क्षण-भर में हरा-भरा कर सकता है तो वह इस राज्य राजा-रानी को सन्तान भी दे सकता है। उन्होंने सारा वृत राजा-रानी के कानों तक पहुँचाया और सुनाया कि आप के ज में एक साधू तपस्या कर रहा है उसका इतना योगवल है कि उ पल-भर में ही सारे का सारा जंगल हरा-भरा कर दिया। इसलि आप भी उसकी शरण में जाओ। शायद तुम्हारे घर में भी सन्

दे दें। रानी अपनी दासियों के साथ जंगल में आई और नाथ को दण्डवत प्रणाम किया। जब सहजनाथ जी ने रानी को देखा, वह बोले – "रानी तुम जाओ, हम अकेली औरतों के साथ बात नहीं करते। यदि तुम्हें आना है तो अपने पति के साथ आओ।" इतनी बात सुनते ही रानी चमेली महलों में लौट आई। रात को बावा सहजनाथ जी ने राजा बलारदेव को अपनी लीला दिखाई। जब वह सोया, तो उसने स्वप्न में देखा कि जांडी में गोरखनाथ जी अपने चेलों के साथ आए हैं। राजा गोरखनाथ की बड़ी सेवा करता है। राजा उनके धूने में लकड़ियाँ डाल रहा है और रानी चमेली पानी ला रही है। अन्त में गोरखनाथ जी ने प्रसन्न होकर कहा, "राजा तुम क्या चाहते हो?" तब राजा ने कहा, "महाराज, आपकी कृपा से सब चीजें हैं परन्तु हमारे घर सन्तान नहीं है।" इस पर गोरखनाथ जी ने कहा, "राजा, तुम एक पुत्र मांगते हो, हम तुम्हें दो देंगे।" इतनी बात कह कर गोरखनाथ जी ने उन्हें दो बेटे दिये। एक तो रानी के साथ सोया हुआ था और दूसरा राजा के पास पलंग पर खेल रहा था। परन्तु प्रातःकाल रानी चमेली ने राजा को यह सम्बोधित करके उठाया – "पतिदेव प्रभात हो गई है।" राजा हड़बड़ा कर उठा और आगे-पीछे देख कर उदास हो गया। यह देखकर रानी चमेली ने पूछा, "पतिदेव, क्या बात है, आगे तो आप खुशी-२ उठते थे परन्तु आज बहुत उदास क्यों हैं।" इस पर राजा ने उत्तर दिया, "रानी! आज स्वप्न में मैंने और तूने योगियों की जी-जान से सेवा की है और बाद में गोरखनाथ जी ने हमें दो पुत्र दिये और एक पुत्र तुम्हारे साथ सोया था और दूसरा मेरे साथ खेल रहा था, इतने में तुमने उठा दिया।" तब रानी ने कहा,

"पतिदेव, अभी जंगल में चलो, वहाँ पर एक सिद्ध योगी आया है
उसने इस सूखे जंगल को क्षण भर में हरा-भरा कर दिया है
चलो, हम उसी की सेवा करें, शायद वह हमारे घर भी सन्तान
दे।" परन्तु राजा बलारदेव बोला, "रानी, हमारे घर में सात जन्म
सन्तान नहीं है। वह हमें कैसे सन्तान देगा?" इस पर रानी
कहा, "पतिदेव, योगी ही रेख पर मेख मार सकता है। वह चा
तो हमें अभी सन्तान दे सकता है। इसलिये चलो, हम अभी च
और सेवा करें, शायद वह सन्तान दे दे।" तब राजा मान गया औ
राजा तथा रानी दोनों नंगे पाँव सहजनाथ जी के पास जंगलों
गये और देखा कि बावा जी अपनी समाधि में मग्न हैं। वह योगी
की प्रदक्षिण लेकर उनकी सेवा में रत्त हो गए। उनको सेव
करते-२ बहुत समय बीत गया। एक दिन संमाधि खुलने पर उनकी
सेवा पर प्रसन्न होकर बावा जी ने पूछा, "हे राजन्! कैसे हो?
राजपाट कैसे चल रहा है?" इस पर राजा जा बोले, "नाथ जी
आपकी कृपा से हम कुशल है और राजपाट भी ठीक चल रह
है।" दोबारा सहजनाथ जी ने पूछा, "राजन् कैसे आए हो?" राजा
ने उत्तर दिया, "नाथ जी, हमारे घर सन्तान नहीं है और हम
सन्तान के लिए आपके यहाँ आए हैं।" इस पर सहजनाथ जी बोले
"राजन्! तुम्हारे घर तो सात जन्म से सन्तान नहीं है। मैं आपको
कैसे सन्तान दे सकता हूँ। हां! एक उपाय है अगर तुम कर सको
तो शायद तुम्हें सन्तान मिल जाए।" इस पर राजा ने पूछा, "नाथ
जी! वह कौन सा उपाय है? हम सन्तान के लिए सब कुछ कर
सकते हैं।" तब सहजनाथ जी ने कहा, "राजन्! मैं अपने गुरु
गोरखनाथ के पास जा कर कुछ विनती करूंगा, शायद वह तुम्हें

सन्तान दे दें, परन्तु इस अवधि के भीतर आपको महलों में नहीं जाना है, यहीं पर, इसी धूने पर बैठना है और यह धूना बुझना नहीं चाहिए और मेरे आने तक आपको एक सौ एक बावली निकालनी होगी।" राजा ने फिर पूछा, "आप कितनी देर तक आएंगे।" तब सहजनाथ जी ने दोबारा कहा, "राजन्! हमारा क्या पता, हमें कितनी देर लग जाए। क्या आपको स्वीकार है।" इस पर रानी ने कहा, "मुझे तो यह बात स्वीकार है।" राजा पहले तो हिचकिचाया और बाद में वह भी मान गया। तब दूसरे दिन राजा बलारदेव और रानी चमेली धूने पर आ बैठे। वह इस घोर तप में लीन हो गये। दोनों ने श्री० गोरखनाथ का नाम परम श्रद्धा सहित जपना आरम्भ कर दिया। राजा लकड़ियों के गठ्ठे ढोता तथा रानी अपने सिर पर पानी लाती। सहजनाथ जी उसी दिन पवन रूप होकर टिल्ला में गये, तो वहां आगे ही गोरखनाथ जी छः मास की समाधि लगाकर बैठे थे। सहजनाथ जी ने भी छः मास की समाधि लगा ली। जब गोरखनाथ जी छः मास के पश्चात् उठे तो उन्होंने देखा कि सहजनाथ जी सामने समाधि लगाए हैं। कुछ देर पश्चात् सहजनाथ जी समाधि से उठे और उन्होंने श्री० गोरखनाथ जी को प्रणाम किया। तब श्री० गोरखनाथ जी ने पूछा, "बेटा सहजनाथ! तुम कब और किस कारण से आए हो?" इस पर सहजनाथ जी ने उत्तर दिया, "गुरु जी, मुझे यहां आए हुए छः मास हो गये हैं। आप तो जानीजान हैं, आप स्वयं ही मेरे आने का कारण जानो।" इतनी बात सुनते ही श्री० गोरखनाथ जी ने अर्न्तध्यान होकर देखा, तो राजा और रानी बड़ी श्रद्धा से उन्हीं का नाम जपते हुए, धूने की सेवा करते हुए दिखाई दिये। तब गुरु जी ने सहजनाथ जी से

पूछा, "वह धूने की सेवा किस लिए कर रहें हैं।" इस पर सहजनाथ ने कहा, "गुरुदेव, वह सन्तान चाहते हैं।" गोरखनाथ जी ने कहा, "सहजनाथ, उनके घर तो सात जन्म सन्तान नहीं है।" इस पर सहजनाथ ने कहा, "गुरुदेव! आप महान कृपालु हैं। अति दीन दुखियों का कष्ट हरने वाले हैं। राजा-रानी ने आप की सेवा बड़ी तपस्या सें की है। इन्हें वरदान प्रदान कर कृतार्थ करने की दया करें। इतनी बात सुनकर पहले तो वह चुप हो गये परन्तु बाद में प्रसन्नता-पूर्वक गोरखनाथ जी ने सहजनाथ जी से कहा, "बेटा, वह एक वर मांगते हैं हम उन्हें दो देंगे। जाओ, यह दो आम उन्हें दे दो, परन्तु इस कार्य को कीर्ति से करवाना।" जब सहजनाथ जी अपने गुरु से दोनों वर लेकर सीधे वहाँ पहुँचे, जहाँ राजा तथा रानी धूने की सेवा कर रहे थे। वहाँ जाकर सहजनाथ जी ने राजा से कहा, "राजन्! उठो, आप के लिए वरदान लाया हूँ।" तब राजा और रानी उठे तथा श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया और बोले, "महाराज! क्या आप हमारे लिए सन्तान का वरदान ले आए।" "हां, राजन्! आपके लिए सन्तान का वरदान ले आया हूँ, परन्तु इसके लिए आपको अपना राजपाट त्यागना होगा और साथ अपनी जात बतलनी होगी," सहजनाथ ने कहा। राजा ने कहा, नाथ जी हमें सब कुछ स्वीकार है।"

जब राजा-रानी ने बावा सहजनाथ जी की सब बातें मान लीं, तो बावा जी ने उन्हें कहा, कि जाकर किसी औगड़पीर योगी को ले आओ। यह सब कीर्ति उसी द्वारा की जायेगी। इस पर राजा ने कहा - "महाराज आप किसी योगी के बारे में बताएँ। हम

अभी उसे ले आते हैं।" तब सहजनाथ जी ने कहा, "हे राजन् करोल माथरयां गाँव में अलयासनाथ नामक औगड़ीपीर योगी है। उसे ले आओ। वही यह कीर्ति करेगा।" यह सुनते ही राजा बलारदेव स्वयं करोल माथरयां गाँव (तहसील हीरानगर) गये और अलयासनाथ को सारी बात सुनाई और उसे अपने साथ जांडी ले आये। अलयासनाथ को देखकर सहजनाथ जी ने आदेशादेश निवेदन किया और पूछा, "क्या आप धूने की, राजपाट की, बावली पूजा तथा आसन का मंत्र जानते हो?" अलयासनाथ ने कहा, योगी, मैं सभी विधियाँ जानता हूँ।" इस पर सहजनाथ जी ने कहा, "जाओ और पहले धूने की पूजा कराओ और फिर अन्य की पूजा कराओ।" अलयासनाथ जी ने सहजनाथ जी के कहे अनुसार सभी चीज़ों की पूजना कराई।

जंडयाल वंश की उत्पत्ति

जब यह सब कुछ हो चुका तो सहजनाथ जी ने राजा से कहा, "राजन्! अब तुम अपने वायदे के अनुसार अपना राजपाट छोड़ दो और अपनी जाति भी छोड़ दो। तत्पश्चात् तुम अपनी जाति बताओ।" राजा ने अपने वायदे के अनुसार अपना राजपाट छोड़ दिया और सहजनाथ जी को बताया, "नाथ, मेरी जात जम्वाल है।" तब सहजनाथ जी ने राजा को कहा, "राजन्! आगे से तुम्हारी जात जम्वाल के स्थान पर जंडयाल होगी। वहाँ पर इलाइची का पौधा लगाया और राजा से कहा, "जैसे-२ यह पौधा फलेगा

वैसे ही तुम्हारी संतान फलेगी और आगे बढ़ेगी। तुम तो जंडयाल हो और रानी चमैली पठान है, इसलिए उसे किसी महाजन् की पुत्री बनना होगा और वहाँ एक बावली निकलवानी होगी और फिर तुम्हारा दोबारा विवाह होगा।" अब सहजनाथ जी के कहे अनुसार रानी चमैली सुन्दरचक के पास के गाँव में हीरू महाजन की पुत्री बनी और वहाँ पर एक बावली निकलवाई। तब दोबारा राजा तथा रानी का विवाह अलयासनाथ ने करवाया और बाद में राजा तथा रानी पास के गाँव में चले गये और वहाँ उनके घर दो पुत्र हुए। जिन में एक का नाम गौकर्ण और दूसरे का नाम सौमकर्ण रखा गया। इन दोनों की सन्तान जंडयाल कहलाए।

कई पुश्तों के पश्चात सोहल गाँव (अखनूर तहसील) में एक काहना नामी ब्राह्मण को अति कलेश पहुँचा। इस पाप से बचने के लिए इस खानदान ने पश्चाताप के तौर पर अपनी जाति के नाम के साथ शब्द "सनसाह" बढ़ा दिया और साथ ही ब्राह्मण पूजा भी आरम्भ कर दी। कई बजुर्ग कहते थे, कि बावा जी के आर्शीवाद से उनको मानने वाले बहुत सुखी व दयालु थे। इनको दूसरे लोग "शहनशाह" कह कर भी पुकारते थे। समयकाल व्यतीत होने पर शब्द "शहनशाह" अपभ्रंश होकर "सनसाह" बन गया। जंडयाल वंश योगीराज बावा सहजनाथ जी की ही देन है। यह उन्हीं की बाड़ी है। जितनी बावा जी की सेवा करने वाला कोई होगा उतनी ही वह हर प्रकार की वृद्धि पाएगा। चूँकि जांडी के राजाओं की तपोभूमि से ही यह वंश चल रहा है और जांडी में तपस्या करते हुए ही इस वंश की दाग बेल योगीराज श्री० बावा सहजनाथ द्वारा

रखी गई है। बावा जी का जांडी वाला तपोवन ही इसका पवित्र मौलिक तीर्थस्थान है। यह अलग बात है कि अपनी-२ सहूलियत के लिए अलग-२ स्थानों पर बावा जी के मन्दिर स्थपित किए गये हैं। जैसे कि कार्तिक पूर्णिमा के शुभ दिन पर पंजाब वाले तारागढ़ के स्थान पर, जम्मू और आसपास के लोग तालाब तिल्लो और सनसाह शाखी जंडयाल अखनूर (कामेश्वर मन्दिर) बावा सहजनाथ जी के स्थानों पर इकट्ठे होकर उनकी पूजा, आराधना और यज्ञ करते हैं। वहाँ बावा की भेंटें भी बड़े प्रेम से गाई जाती हैं। पाकिस्तान बनने से पहले समस्त जंडयाल बरादरी कार्तिक पूर्णिमा के शुभ अवसर पर जफोलोटा गाँव (तहसील शकरगढ़) में बावा जी की पूजा और आराधना के लिये इकट्ठे होते थे।

बावा मुस्सदी

जफोलोटा (जाप्पोलोटा) गाँव बावा सहजनाथ जी की तपोभूमि जांडी (निकट हीरानगर-जम्मू कश्मीर) से 6 मील दक्षिण की ओर स्थित है।

1947 में यह गाँव पाकिस्तान में चला गया। इस गाँव में बस रहे जंडयाल बावा जी के परम भक्त थे। अगाध श्रद्धा से उनकी पूजा आराधना किया करते थे और उनके बताए हुए नियमों के अनुसार अपनी जीवन-यात्रा व्यतीत करते थे। इस गाँव के एक परिवार में पाँच भाई थें। सब से छोटे का नाम मुस्सदी था। वह बचपन से ही अपने कुलदेवता बावा सहजनाथ जी का सच्चा भक्त

था। उसके हाथ पाँव कमज़ोर थे।

पास वाले जंगल से गाँव के बालक बालन के लिए लकड़ियाँ लाते थे। एक दिन वह 15 वर्षीय मुस्सदी को भी भुला फिसला कर अपने साथ जंगल में ले गए। लकड़ियां इकटठ्ी कर चुकने पर लड़कों को शरारत सूझी। उन्होंने निश्चय किया कि कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे की सहायता न करेगा। सभी अपना-अपना बोझ इकटठ्ा कर के स्वयं ही अपने सिर पर उठा कर घर ले चलेंगे। हाथ-पाँव कमज़ोर होने के कारण बेचारा मुस्सदी अकेला जंगल में रह गया। न ही उन लड़कों में से और न ही कोई घर से उसकी सहायता के लिए आया। प्रतीक्षा करते-करते सूर्यास्त का समय निकट आ गया। मुस्सदी हताश हो गया। चूँकि वह बावा सहजनाथ जी का सच्चा भक्त था, मुस्सदी ने अपने अहम्-भाव और सांसारिक सम्बन्धों को भुला कर बड़े आरत भाव से अपने कुलदेव की अनन्य-भाव से शरण ली। श्रद्धा भरी प्रार्थना करते हुए यूं कहा -

"हे कुलदेव बावा सहजनाथ जी! सांसारिक सम्बन्धों से मैं पहले ही ऊब चुका था, आज तो यह मोह बिल्कुल खत्म हो गया है। आप मेरे कुल के सृजनहार हैं आप ही इस के रक्षक हैं। यह निःसहाय जीव पूर्णतया आरत-भाव से आप की शरण में है। सदा आपके आदेश अनुसार कार्य किया करूंगा। प्रार्थना है, कि यदि मैं आप का सच्चा भक्त हूँ तो मुझे इस व्यथा से बचाऐं।"

मुस्सदी के सच्चे हृदय से शरणागत होते ही बावा जी ने उसकी सहायता की। आवाज़ हुई - "उठो और अपना बोझ उठाओ।" मुस्सदी हैरान हो गया। फिर आवाज़ आई - "डरो मत,

हिम्मत करो, अपने आप की स्वयं सहायता करो, यही प्रकृति का नियम है। मुस्सदी को धैर्य हुआ। उसने आज्ञा पालन करते हुए झट अपना बोझा उठा लिया और घर की ओर चल पड़ा। ऐसा मालूम हुआ कि बोझा उसके सिर से कुछ ऊपर धरा सा उसके साथ चल रहा था।

घर पहुँचते ही मुस्सदी ने अपने अहंभाव को खो दिया। बावा जी की सच्चे हृदय से प्रेमाश्रु बहाते हुए यूँ प्रार्थना की – "हे नाथ! आप मेरे सृजनहार तथा रक्षक हैं मुझ पर अति दया कर मुझे घोर संकट से बचाया है। मेरी प्रार्थना है कि मुझे अपने साक्षात दर्शनों से कृतार्थ करें, नहीं तो आपकी याद में रोते-तड़पते प्राण दे दूँगा।" इस प्रेम भरी आरती पर बावा जी ने उसे अपना स्वरूप साक्षात दिखलाया और उसे आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान किया।

अब मुस्सदी आध्यात्मिक ज्ञानानुसार अपना जीवन व्यतीत करने लगे और प्रभु भक्ति में मस्त हो गए। इस पर घर वाले तथा गाँव के लोग इन को पागल समझने लगे और कहने लगे कि वह जंगल में अकेला रह गया था, वहाँ किसी ने इस पर कोई जादू कर दिया है जिस के कारण यह इस किस्म की बातें और कार्य कर रहा है। उन्होंने इन को इस जादू से बचाने के लिए सोचा कि इस को साँथ वाले मुटठी नामी गाँव में मशहूर संत के पास ले चलते हैं। मुस्सदी ने रास्ते में उनको बताया कि यह संत तो स्वयं ही इस संसार में आठ ही दिनों का मेहमान है। जब यह लोग वहाँ पहुंचे तो संत ने बड़े आदर भाव से स्वागत् करते हुए कहा – "आइऐ, बावा मुस्सदी जी पधारिये, मेरा सादर प्रणाम् स्वीकार करें।" उसे वहाँ

ले जाने वाले हैरान हो गए। महात्मा ने उन्हें बताया कि - "परम शक्तिमान बावा सहजनाथ जी ने इस बालक पर अति कृपा कर इस का ज्ञान यक्ष खोल दिया है। आप लोग इसे एक साधारण व्यक्ति न समझें। इसे पूर्ण ज्ञान हो गया है। इसके मुँह से निकला वाक्य पूरा सच्चा होगा। अपने प्रभु-भक्ति के बल से यह आप सभी का कल्याण करेंगे। इन को पूर्ण आदर मान देने से और इनके वचनों पर चलने से आप भली प्रकार फलें-फूलेंगे। आज से इनको बावा मुस्सदी कहा करें।"

बावा मुस्सदी को घर लाया गया। वह दिन-रात बावा जी की पूजा में मग्न हो गए। कभी-कभी अपनी प्यारी आदरणीय माँ से खाना खाते समय दो थाल खाने के लगवाते थे। माँ के पूछने पर बताया कि कभी-कभी बावा सहजनाथ जी मेरे ही रूप में प्रकट हो कर मेरे साथ खाना खाते हैं। माँ को आश्चर्य हुआ और कहा कि बेटा हमें भी दर्शन कराओ। भक्तों के वश में रहने वाले बावा जी ने माँ की इच्छा पूर्ण की। साक्षात् दर्शन का तेज माँ न सह सकी, बेहोश हो गइ। होश में आई तो केवल बावा मुस्सदी को ही वहाँ पाया।

बावा मुस्सदी न केवल स्वयं ही बावा सहजनाथ जी के जीवन नियमों पर खूब चले, बल्कि सभी कुटम्बियों तथा जनता को प्रेरणा की, कि वह मायाजाल और आवागवन के बन्धन से मुक्त होने के लिए बावा जी की शिक्षा अनुसार एक बार ब्रह्मा सर्व शक्तिमान सर्व-व्यापाक की शरण ग्रहण करें।

एक पूर्णमाशी के दिन जनता यज्ञ कर रही थी - पास ही

एक गाय गिर कर मर गई। ब्रह्माणों ने यज्ञ में भोजन करने से इनकार कर दिया। यज्ञ करने वालों ने बावा मुस्सदी की शरण ली। बावा जी ने गाय को जीवनदान दिया, सभी बड़े प्रसन्न हुए कि यज्ञ सफल हुआ।

बावा मुस्सदी इस प्रकार के कई चमत्कार रोज़ाना करते रहे, किसी के दिखलावे के लिए नहीं, बल्कि जन-कल्याण के लिए।

बावा मुस्सदी ने अपने परिवार को कहा कि, वह जफोलोटा छोड़ कर कहीं और चले जाऐं और जहाँ आजकल बावा सहजनाथ जी के दर्शन होते हैं वहाँ उनका मन्दिर (स्थान) बनवाया जाए। वह चारों भाई अलग-अलग जगहों पर चले गए। सब जगहें तहसील शकरगढ़ में ही थी -

1) दीनपुर, 2) बहरामपुर, 3) छन मानसिंह, 4) त्याल। बावा मुस्सदी स्वयं मढ़ त्याल के स्थान पर रहे। वहाँ वह आजीवन जन-कल्याण में लगे रहे। तमाम जातियाँ, उपजातियाँ उनको मानती थीं और लाभ उठाती थीं।

जंडयाल वंश के इष्टदेव और पूज्य इस तरह बावा सहजनाथ जी हुए। यह जंडयालों के कुलदेव हैं, इन्हीं की पूजा और सेवा से जंडयाल उन्नति पा रहें हैं। परन्तु सही पूजा और सेवा से ही पूर्ण लाभ हो सकता है। सही पूजा इसी में है, कि इन के दर्शाए तथा अपनाए हुए निम्नलिखित जीवन नियमों पर पूर्णतया चला जाए और इन जैसी योग साधना करते हुए अपने और दूसरों के कल्याण में जीवन अर्पण किया जाए।

(क) मानव के अन्दर रोम-रोम में हर समय रमने वाली शक्ति से हर समय नाद उठ रहा है - यही ॐ ध्वनि है इस चेतनामय ज्योति के नाद का श्रद्धा सहित स्मरण ध्यान और जप करने से ही परम तत्व सच्चिदानन्द की प्राप्ति हो सकती है।

(ख) प्रणव (ॐ) ध्वनि तैलधारा के समान अविच्छिन्न रूप में ध्वनित हो रही है, उस नाद का एक तान श्रवण चित्त वृत्तियों को शांत या निरुद्ध कर देता है।

(ग) चित्त वृत्तियों का निरोध ही मानव की परम साधना है यही महामाया के प्रपंच और संसार में आवागमन के चक्र से मुक्त करवाता है।

(घ) इसी तथ्य को श्रीमद्भगवद्गीता के आठवें अध्याय के तेरहवें श्लोक में इस तरह दर्शाया गया है कि इस एकाक्षर ब्रह्मावाचक ॐ ध्वनि के सतत: स्मरण और ध्यान से श्रेष्ठ सद्गति प्राप्त होती है।

बावा सहजनाथ जी को भान्ति परमज्योति में निमग्न अपनी अन्तर-ज्योति को जागृत रखने वाला, काम, क्रोध आदि मानव-शत्रुओं को जीतने वाला बहादुर और अपने वंश तथा मानव जाति का कल्याण करने वाला ही बावा का सही पुजारी अर्थात सच्चा जंडयाल है।

जय बावा सहजनाथ जी की।

जांड़ी की महिमा

दिनांक 24-9-70 की उर्दू प्रदीप समाचार पत्र में सांम्बा निवासी कवि श्री० दुर्गादास गुप्ता ने जांडी की महिमा वर्णन की है। इसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है -

हीरानगर से तीन किलोमीटर पश्चिम की ओर जांडी नाम का एक गाँव है। जिसको जम्मू प्रांत का कश्मीर भी कहते हैं। इस स्थान पर सैंकड़ों बावलियां व सुन्दर बाग देखने योग्य हैं। इसके बिल्कुल निकट दो छोटी-२ नदियां बहतीं हैं। गर्मियों में यहाँ सैर करने वालों की भारी भीड़ होती है। यहां परशुराम के पिता जमदगनीं जी ने तपस्या की है। जमदगनीं से ही जांडी नाम पड़ा है। महर्षि जमदगनीं की तपस्या के समय की बात है कि एक राजा सहसर बाहु शिकार खेलता हुआ महर्षि जी के आश्रम में आ पहुँचा। उन्होंने राजा तथा उनकी सेना का बड़ा सत्कार किया। ऋषि जी के पास कामधेनु नाम की एक गाय थी, जो मुँह-मांगी वस्तु देती थी। राजा ने महर्षि जी से यह गाय मांगी। उन्होंने गाय देने से इनकार कर दिया। इस पर राजा ने ज़बरदस्ती उन (ऋषि) से गाय छीन ली। तत्पश्चात जब भगवान परशुराम जी को पता चला कि राजा गाय छीन कर ले गया है, तो उन्होंने राजा सहसर बाहु के राज्य पर आक्रमण कर दिया और कामधेनु गाय लेने में सफल हो गये। तत्पश्चात राजा सहसर बाहु के पुत्रों ने आश्रम में आकर समाधि में बैठे हुए महर्षि जमदगनीं का सिर काट दिया। तब परशुराम जी की माता रेनुका की कृपा से गंगा नदी महर्षि जी के चरणों में बहने लगी। और उनकी सेवा में जुट गई। इसलिए

आज भी लोग इस गंगा में स्नान कर, अपने दुःखों को दूर करते हैं।

बारहवीं शताब्दी में जब परमसिद्ध बावा सहजनाथ जी पधारे, तो उन्होंने भी तपस्या की। उस समय, यहां राजा बलारदेव राज्य करता था। सन्तान न होने के कारण वह बहुत दुःखी था। वह बावा जी की शरण में आया तो बावा जी के कहे अनुसार अपने राज्य को दान में देकर तथा अपनी जाति को बदल कर जमवाल से जंडयाल (महाजन) बना। ऐसा करने से उसके यहां दो पुत्र हुए। आज के जंडयाल (महाजन) उसी राजा की सन्तान हैं। इसलिए भारत के कोने-२ से जंडयाल (महाजन) कार्तिक-पूर्णमाशी तथा आषाढ़ की पूर्णमाशी को यहां आकर श्रद्धा के फूल चढ़ाते हैं। वहाँ के जरनेल देवी सिंह ने बाग में एक विशाल शिवालय बनवाया है। यह शिवालय कामेश्वर महाराज के नाम से प्रसिद्ध है। इस स्थान पर पहले जमवाल वंश के राजा करतार देव जी जम्मू से आकर बस गए। उन्होंने इस स्थान को बाग के रूप में बनाया। स्वामी शेरनाथ जी ने भी इस स्थान पर तप किया। फिर 1965 में स्वामी अमरनाथ जी यात्रा करते हुए श्री० 108 स्वामी शाग्तानन्द जी यहाँ पधारे। उन्होंने भी यहां तप किया। उन्होंने यहाँ गीता भवन का निर्माण किया। यहाँ शिव रात्री, चेत चौदश और कृष्ण जन्माष्टमी बड़ी धूम-धाम से मनाई जाती है। जांडी का यह पवित्र स्थान महर्षि जमदगनीं और जंडयाल (महाजन) बरादरी का पवित्र देव स्थान है। अब और भी कई हिन्दू जातियां यहाँ की बावलियों के अन्दर अपने देवताओं की मूर्तियों की तलाश कर रहे हैं। यहाँ कुछ

जंडयाल (महाजन) अपने बच्चों के मुन्डन-संस्कार आदि भी करते हैं।

जंडयालों में यह दृढ़ विश्वास है और प्रत्यक्ष भी सामने आता है कि जिस भक्त ने अपने इष्ट-देव *बावा सहजनाथ जी पर* अटल विश्वास रखते हुए उनकी हृदय से पूजा, याचना तथा आराधना की, वही सर्व-सुखी हो गया। धन-धान्य या सन्तान इत्यादि किसी प्रकार की अपूर्णता न रही।

जफोलोटा में बावा जी का स्थान

जफोलोटा में बावा सहजनाथ जी ने समाधि स्थित कई वर्ष लगातार घोर तपस्या द्वारा योग साधना से क्रिया योग की परावस्था प्राप्त की। अपनी अन्तर ज्योति को परमः ज्योति के साथ एक कर के पूर्ण शान्ति और परम आनन्द का अनुभव किया। जिस कुटिया में वह योग साधना करते थे, उसका वातावरण पूर्ण सुख-शान्ति से आज तक भी भरपूर है। पाकिस्तानी लोग भी इस स्थान की बड़ी मान्यता करते हैं। वहाँ की श्रद्धा तथा मान्यता से वह अपने दिलों की मुरादें पूर्ण करते हैं।

पाकिस्तान बनने से पहले जंडयाल जाति के लोग बड़े प्रेम भाव से पूर्णमाशी के दिन जफोलोटा स्थान पर एकत्रित होते थे। दिन-रात बावा जी की पूजा आराधना करते आनन्द प्राप्त करते थे।

स्थान का कमरा छोटा होने के कारण प्रबन्धकों ने इस की बढ़ाने की तैयारी की। जब दीवार को तोड़ा, उस में से नाग निकले, तो उन्होंने दीवार तोड़ना बंद कर दी। कमरे से अलग उस के बाहर एक बड़ी सराय बनाना आरम्भ की। उस के पूरी तरह बनने से पहले वह स्थान पाकिस्तान में चला गया।

बावा सहजनाथ जी की जीवन यात्रा से प्रात्पब्य शिक्षाऐं

1. योगाभ्यास मोह-माया के घोर जाल से छुटकारा पाने में सहायक होता है।
2. संसार में पग-पग पर माया का मोह जाल बिछा है, उस से बच कर चलने वाला ही वीर साधक है।
3. अपने सशक्त सद्‌गुरू में परम श्रद्धा और अनंन्य भक्ति में ही मानव का उद्धार व कल्याण छिपा है।
4. भद्र पुरूषों का जीवन जन-उद्धार, जन-कल्याण और जन-सेवा के कार्यों में निहित है।
5. योगी लोग भद्र पुरूषों के सहायक होते हैं तथा दुष्टों को सत्प्रेरणा दे कर सत्मार्ग दिखाते हैं।
6. मानव-जीवन का परं-लक्ष्य परं-सुख, परं-आनन्द हैं तथा जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा पाना है।

7. अध्यात्म उन्नति तथा जीवन लक्ष्य के लिए सद्गुरू की सहायता अनिवार्य है जो पात्र को मिलती है।

योग डंडा

बावा जी का योग डंडा जो इनके स्थान पर रखा होता है वह मेरुदण्ड का ही प्रतीक है। स्थान पर रखे हुए लकड़ी के डंडे की धूप-दीप फूलों से ही पूजा को सीमित करने से यर्थाथ लाभ प्राप्त नहीं होता।

मेरुदण्ड में साधना द्वारा आत्मस्वरुप पाना ही मानव का असली धर्म और मानवता का लक्ष्य है। आत्मस्वरुप पाने के लिए यह अनिवार्य है कि योगाभ्यास द्वारा प्राणों को अधोगति से रोक कर ऊर्धवगनि में लाकर क्रियायोग की पराकाष्टा को प्राप्त किया जाए, तब प्राण की चंचलता न रहेगी, तभी मन शान्त होगा और मन-शान्ति से ही परम आनन्द प्राप्त होगा।

धूना

बावा जी समाधि लगाते धूना जगा रखते थे। इसका यह मतलब नहीं कि बालन के साथ धूना जगाया जाता था। अपने अन्दर की आत्मशक्ति को योगाभ्यास द्वारा जगाए रखना ही धूने का जगाए रखना होता है।

नाद

बावा जी नाद जगाते थे इसका यह मतलब नहीं कि वह किसी प्रकार की बीना बजाते थे। वह अपनी प्राण शक्ति को उर्ध्व गति में ले जाते हुए मेरुदण्ड में स्थित केन्द्रों के ऊपर ब्रह्मरन्ध्र में नाद तक ले जाते थे। ॐ की ध्वनि सब से नीचे (मूलाधार) चक्र से आरम्भ करके नाद के स्थान तक सुनते थे, ॐ की इस ध्वनि को नाद कहा जाता है। बावा जी जब अलख जगाते थे तो पारब्रह्म परमेश्वर को सम्बोधित करते थे।

बावा जी के भक्तों का कर्तव्य

बावा जी की सही भक्ति यही है कि उनकी शिक्षाओं को भली प्रकार जीवन में ढाला जाए।

प्रभु से प्रत्येक क्षण प्रार्थना होनी ज़रूरी है, कि वह हमें सद्बुद्धि और स्वास्थ्य प्रदान करें, कि हम उनके उपदेशों को जीवन में डाल सकें।

बावा सहजनाथ जी के चरणों में शरणागति

द्वारे तेरे आया बावा, शरण तुम्हारी आया
अपनाओ या तुम दुतकारो, अधम उद्धारण नाम तिहारी

गिरता पड़ता आया बावा – द्वारे तेरे आया . . . . .

अपनाओ तो कृपा है तेरी, दुतकारो जो मौज है तेरी
तेरा भाना भाया भगवन – द्वारे तेरे आया . . . . . .

दया तुम्हारी का हूँ भिखारी, करो कृपा आरत पर भारी
चरणन सीस निवामा भगवन – द्वारे तेरे आया . . . . . .

दूर करो सब दुर्गुण मेरे, जीवन अर्पण प्रभु वर तेरे
विश्व में क्यों भरमाया भगवन – द्वारे तेरे आया बावा
शरण तुम्हारी आया . . . . .

प्रीतम तेरे पास वसदा, ढूंढन काहनूं जावना

काहनूं ढूंढें ओहनूं थां थां, थां केहड़ी जित्थे ओ नहीं वसदा
दिल दा वाली दिल दा महरम,
दिल तेरे दिलदार ओ वसदा ढूंढन . . . .

दिल दियां तेरी कुंज गलिन विच, प्रीतम बैठा तकदा हसदा
लुकदा छुपदा प्रीत परखदा – ढूंढन काहनूं जावना . . . .

प्यार भरी ओ पुकार तेरी ते, सुनदा आऊंदा नठदा भजदा
प्रीत तेरी दा बद्धां प्रीतम . . . . ढूंढन काहनूं जावना . . . .

प्रेमी प्रीतम, प्रीतम प्रेमी, प्रीत पहेली समझन विरले
करख दे ओहले अलख लखीदा, ढूंढन . . . .

मन दी अखियां खोल के वेखीं, सुनो ओ जो मन अंदर ओ आखे
विश्व तेरे मन प्रीतम वसदा ढूंढन काहनूं . . . .

भजन

तेरे राहवां तू वारे वारे जांवां,
जांडी विच आन वालेया।

तेरे धूने नूं सीस झुकावां,
टिल्ले विचों आन वालेया।

तेरी जगमग ज्योति जग रही ए,
तेरे चरणां च राजा ते रानी आए ने।

ओ दोवें अरदासां करदे ने,
तेरे चरणां च दास तेरे रोंदे ने।

तेनु रो रो के दुखड़े सुनांदे ने,
सहज दोवां नूं चरणां च ला लै।

सहज दोवां नूं चरणां च ला लै,
ओ जांडी विच बैन वालेया।

मेरे घटां विच दिये तू जगा देना ए,
तूएं गोदियां विच लाल भी दे देना ए।

तेरे दिन-रातीं में गुण गावां,
टिल्ले विचों आन वालेया।

तेरे राहवां तु वारे वारे जावां,
जांडी विच आन वालेया।

❖ ❖ ❖

प्रार्थना

मुझे भक्ति दे प्रभु प्यार दे, सद्बुद्धि दे सुविचार दे
हे आत्मदा बलदा विभो, मन प्राणों पर अधिकार दे।

तेरी नाम धुन पै स्वार हो, पहुँचूँ मैं तेरे धाम को
देखा करूं तुम को सदा, परदा तू अपना उधार दे।

सौंदर्य में तेरे प्रभो, मैं भूल जाऊं अपने को
आनन्द रस में मग्न हो विरक्त इस संसार से।

आरत की है यही आरती, तेरे विश्व का आधार यह
ज्ञानी के मन की कामना, तेरे भक्त की है पुकार यह
मुझे भक्ति दे प्रभु प्यार दे, सद्बुद्धि दे सुविचार दे।

❖ ❖ ❖

भजन

सहजनाथ का सुमरिण कर प्राणी,
जो लोभ की प्यास का नाश करे।

यह सकल पसारा है जिसका,
घट घट उजियारा है जिसका,
यह सुख के देने वाले हैं और
सकले दु:ख को नाश करें।

सहजनाथ का सुमिरण कर प्राणी,
जो लोभ की प्यास का नाश करे।

कहीं फूलों में जाकर बास बना,
कहीं दु:खिया रोगी की आस बना,
कहीं व्यापक है जलमें थल में।
कहीं भक्तों के हृदय में बास करें।

सहजनाथ का सुमिरण कर प्राणी,
जो लोभ की प्यास का नाश करे।

तू और नहीं मैं और नहीं

मैं देखूं तुम्हें तू देखे मुझे, हां प्यार में ऐसा होता है
जब प्यार कहीं हो जाता है, तेरा मेरा मिट जाता है
दिल प्यार में बस यह गाता है, तू और नहीं मैं और नहीं
मैं कह न सकूं दिल कहता है, तू और नहीं मैं और नहीं।

जब खुशी के आँसू बहते हैं, दिल प्यार में भर-भर आता है
जब कंठ रूंधे कह पाता हूँ, तू और नहीं मैं और नहीं।

योगी का प्यार निराला है, तन-मन को भुलाने वाला है
अल्मस्त मस्त हो जाता है, तू और नहीं मैं और नहीं।

यह प्यार मिलन कर देता है, सब भेदभाव हर लेता है
यह योग कहूँ संयोग कहूँ, तू और नहीं मैं और नहीं।

इस योग की राहें रोशन हैं, इक "मैं" का परदा हायल है,
तू और नहीं मैं और नहीं।

व्यापक है तू तो कण-कण में, साक्षित्व तेरा मेरे मन में
चैतन्य मेरा ज्योति तेरी, तू और नहीं मैं और नहीं।

परमात्मा तुम्हें आत्म में लिया देख, विवेक की आँखों से
प्रकाश में तेरे देखा लिया, तू और नहीं मैं और नहीं।

इक ॐ ही ॐ सारे रमा, तू ॐ है मैं कब ॐ नहीं
जब मूल में सब के ॐ है, तू और नहीं मैं और नहीं।

यह भेद सभी खुल जाते हैं, जब समझ में अपनी आता है
है विश्व तू ही "मैं" "मेरी" तू ही, तू और नहीं मैं और नहीं।

❖ ❖ ❖

आरती कुलदेव

ओम् जय सदकुलदेवा स्वामी जय सदकुलदेव
योगेश्वर शिव शंकर तुम देवन देवा।। ओम् जय . . . . . .
अज्ञान विशाद विनाशी, कलिकलमल नाशी (२)

अविनाशी सुख राशि ज्योति प्रकाशी। ओम् जय . . . . . .

अलख निरज्जन ईश्वर घट-घट के स्वामी (२)
सच्चिदानन्द स्वरूपा सर्वान्र्तयामी। ओम् जय . . . . . .

तुम मुक्ति के दाता, भक्त न् सुखदाता (२)
परमानन्द प्रदाता भय त्राता ताता। ओम् जय . . . . . .

श्री सदकुलदेव की आरती निशदिन जो गावे।
चरणन चित्त नित लागे परमानन्द पावे।
जय सदकुलदेवा।

❖ ❖ ❖

आराधना

कृपा तुम्हारी नाथ हो ऐसी, तब चरणन चित्त लागे
चरण कमल में मन मेरा, जागे और अनुरागे।

भक्ति से भरपूर हृदय हो प्रेम भरा दिल मेरा
नेह निरखूं नित्त नैनन से बंधी प्रेम के धागे।

डौले दुनियां डौले कन-कन न डोले मन मेरा
मन में अपने तोहे देखूँ उठते सोते जागे।

जिस के तुम हो विश्व उसी को तुम मेरे बन जाओ
सर्व सुखों की राशि तुम हो, मिलें तुम्हें बड़भागे।

❖ ❖ ❖

भजन

झोक कुलदेव तेरी कितनी क दूर ओ
चरण में बंदुं बंदा हाज़िर हज़ूर ओ . . . . . .

कहूंदे ने सारे नेड़े। लब्बो ते दूर ओ
वस्सें दिलां दे अंदर, दिस्सें क्यों दूर ओ झोक . . . .

नेड़े तू नेड़े तूं ऐं, दूर नूं दूर ओ
दिलां हे नेड़े जेहड़े, कद ओहनां तों दूर ओ। झोक . . . .

मस्ती ते इक दिन मैं नू औनी जरूर जो
आनन्द रस पीके हो मस्त मसरूर ओ। झोक . . . .

तूं ही ते तूं एं सारे (ते) तेरा ज़हर ओ
घड़ी मिलन वाली, फेर न दूर ओ। झोक . . . .

करनी ते अपनी अपनी, मेहर हज़ूर ओ
मौज जो तेरी होवे - नजरीं तां नूर ओ। झोक . . . .

नूर दिलां दे अंदर - अखीं सरूर ओ
होश न रहंदी तदों न ही शऊर ओ। झोक . . . .

प्रीत दी रीत कादी, के ओ दस्तूर ओ
मिलन दी तांग जहों करे मजबूर ओ . . . . . .

विश्व जे ढूंढे तेनूं तेरी ए मौज ओ
गीत जो गावे तेरे रहेमसरूर ओ। झोक . . . . . .

❖ ❖ ❖

साधना

चरण कमल में नाथवर मेरे, नित उठ सीस निवाऊँ मैं
चरण चिह्न पर तेरे चलकर, वांछित वर प्रभु पाऊँ मैं।

हृदय में ध्यान रहे प्रभू तेरा, प्रेरण तुम से पाऊँ मैं
जो कुछ करूं वह अर्पण तेरे, अपना न कुछ चाहूँ मैं।

जैसा रखने में तुम खुश हो, मैं भी उसी में राजी हूँ
बना रहूं प्रभु साधन तेरा, चहा तेरा कर पाऊँ मैं।

विषय वासना बाधा बन कर, सामने मेरे न आ जाए
सत्य रूप न भूलूं अपना, आत्मरूप बन जाऊँ मैं।

विश्व सकल के तुम हो मालिक, मैं तो तेरा बंदा हूं
आदेश तेरा नाथ पाल सकूं, तो जीवन सफल बनाऊँ मैं।

शरणागति

द्वारे तेरे आया नाथ जी, शरण तुम्हारी आया
अपनाओ या तुम दुतकारे, अधम उद्धाहरण नाम तिहारो।
गिरता पड़ता आया नाथ जी, द्वारे तेरे . . . . . .
अपनाओ तो कृपा है तेरी, दुतकारो जो मौज है तेरी
तेरा भाना भाया नाथ जी, द्वारे तेरे . . . . . .

दया तुम्हारी का हूँ भिखारी, करो कृपा आरत पर भारी
चरणन सीस निवामां नाथ जी, द्वारे तेरे . . . . . .

दूर करो सब दुर्गुण मेरे, जीवन अर्पण प्रभुवर मेरे
विश्व में क्यों भरमाया नाथ जी द्वारे तेरे . . . . . .

सहजपुर

धर्मचक्र में धर्म कार्य सम्भोग चक्र में महामुखकार्य की अभिव्यक्ति होती है। यह ही विव्य देह का प्रकटन है। इस स्थिति में दिव्य चक्षु, दिव्य श्रोत, सर्वस्त्व, विभुत्व आदि महागुणों का अविर्भाव होता है। सब से अंत में सम्यक् सम्बुद्ध रूप में बोधिचित्त की स्फूर्ति होती है। आनंद ही अमृत घर है, चंद्रकला से उसका उन्मेष होता है। बोधिचित्त जब अवधूती मार्ग से ऊपर चला जाता है तो उस समय भिन्न-भिन्न प्रकार के आनंद का उन्मेष होता है। षोडश कलात्मक चंद्र की प्रथम की पाँच कलाओं से धर्मचक्र में परमानंद का अविर्भाव होता है और इस बीच पाँच कलाओं से दूसरे प्रकार के दुगने आनंद प्राप्त होते हैं। अमृता नामक षोडशी कला महासुख चक्र में सहज आनंद रूप में अनुभव होती है। यही अमृतकला मानवदेह में अमृता लाती है। यह भी कहा गया है कि देह में चार सरोवर अभिव्यक्त होते हैं। सरोवर दो दाहिनी तरफ (मान और काम सरोवर) और दो बाईं तरफ (प्रेम और क्षय सरोवर) होते हैं। संतवानी के मुताबिक मानसरोवर में स्नान करने से व्यापक मनोरंजन की प्राप्ति होती है। इसके बाद चितानंदमय भगवान

धाम की प्राप्ति के लिऐ महाशून्य का भेदन करना चाहिए। महाप्रलय में समस्त जगत का नाश होने पर भी केवल अक्षय सरोवर ही मोजूद रहता है। अक्षय सरोवर भगवतद्धाम है। मानदेह में यह स्थान मस्तक के सहस्त्रदल कमल में है, यह ही सहजपुर है। अंतकाटि ब्रह्माण्ड़ का भेद हो जानेपर इसकी प्राप्ति होती है। यहाँ काल, .ज़रा और मृत्यु है ही नहीं।

कहा जाता है कि अन्तमय समय पर गोरख गुरू हिमालय की तरफ चले गए और उसके बाद उनका कुछ पता नहीं चला। यह माना गया है कि वह आज भी अमर हैं। उनकी समाधि कहीं भी नहीं मिलती। वैसे ही गुरू जी के प्रमुख शिष्य श्री० गोगा राणा, बावा सहजनाथ आदि सभी अमर हैं। जब-जब उनको आदेश मिलता है वह भारत देश में कहीं-न-कहीं प्रकट होकर अपने भक्तों को दर्शन दे जाते हैं।

योगी कापीनाथ और योगीनाथ जी की भेंट

जब गोरखनाथ जी काफी ज्ञान प्राप्त कर चुके थे तो एक दिन रास्ते में चलते-चलते मछेन्द्रनाथ जी ने गोरखनाथ जी से कहा, "बेटा अब तुम बद्रीनाथ आश्रम में जा कर शंकर भगवान जी की तपस्या करो और उनका वरदान प्राप्त करो। अभी तुम्हें शिव कृपा की आवश्यकता है।" गुरू की आज्ञा पाकर गोरखनाथ जी बद्रीनाथ धाम को चल पड़े और मछेन्द्रनाथ जी तीर्थ यात्रा पर निकल पड़े। अपनी तपस्या सफल करने के बाद गोरखनाथ जी

अपने गुरू मछेन्द्रनाथ जी के दर्शन करके उनको तपस्या का ब्योरा देना चाहते थे। काफी देर खोज के बाद भी उनको गुरू के दर्शन न हो पाऐ।

घूमते घूमते गोरखनाथ राजा गोपीचंद की राजधानी हैलापटट्न में जा पहुँचे।

जब वह नगरी के बगीचे से गुज़र रहे थे, तो उनको वहाँ एक खूबसूरत नाथपंथी योगी जो कान में सोने की मुद्रायें और रेशमी कुर्ता पहनकर वहाँ उपस्थित थे। उनका नाम काफीनाथ था। गोरखनाथ जी के आदेश शब्द उच्चारण करते ही काफीनाथ जी ने उठकर उनका स्वागत किया और अपने पलंग पर ही स्थान दे अपने पास बैठा लिया। गोरखनाथ जी ने अपना परिचय दिया। इतना सुनकर काफीनाथ प्रसन्न हो कर बोले, "भाई इस बाग के आम बहुत ही मीठे हैं। यदि खाने की इच्छा हो तोड़कर मंगवाऊँ।" गोरखनाथ जी ने कहा, कि व्यर्थ परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। मुझे ज़्यादा भूख भी नहीं है। काफीनाथ जी ने कहा कि परेशान होने की आपने खूब कही। मैं अभी शिष्यों को भेजकर ताज़े आम तुड़वाकर मंगवा देता हूँ। इसपर गोरखनाथ जी ने कहा, कि मामूली सी बात पर शिष्यों को क्यों कष्ट दिया जाए। इस पर कनीफानाथ ने विद्या बल से विभाक्तास्त्र के मंत्रों द्वारा अभिमन्त्रित भस्म को आम के वृक्षों की तरफ फैंका जिसके प्रभाव से पके आम टूट कर धरती पर गिर गए और खिंचकर वहा ही पहुँच गए जहाँ दोनों संत बैठे हुए थे। आम खाने के बाद बहुत से आम बच गए। तब गोरखनाथ जी बोले - "भाई इन बचे हुए फलों को बासी करने

का क्या फायदा, इन्हें इनकी जगह पर ही वापिस पहुँचा दो जिससे यह ताज़ा ही रहें, क्योंकि बासी फल खाना हानिकारक है।" इस पर कनीफानाथ बोले – "भाई क्यों अनहोनी बात करते हो। टूटे फल किस प्रकार वृक्ष पर दोबारा लग सकते हैं। गोरखनाथ जी बोले – "जिस प्रकार टूटने से पहले लगे थे।" इसपर काफीनाथ ने गोरखनाथ जी और उनके गुरू का मज़ाक उड़ाया। तब गोरखनाथ जी बोले – "मेरे गुरू की सिखाई विद्या का चमत्कार देखना चाहते हो, तो देखो, तभी उन्होंने प्रेषशस्त्र और संजीवनी मंत्रों से अभिमन्त्रित भस्म आमों पर डाली और देखते ही देखते आम पक्षियों की भाँति उड़कर डालियों पर जा लटके। काफीनाथ चकित रह गए और उन्हें अपनी की हुई वार्ता पर खूब दुखः हुआ। वह समझ गए कि वह (काफीनाथ) गोरखनाथ जी की विद्या से काफी पिछड़ा हुआ है।

इसी तरह का वाक्य जम्मू से लगभग 42 किलोमीटर की दूरी पर एक धार्मिक स्थान मथवार गाँव में है। इसका ब्योरा आगे दिया गया है।

❖ ❖ ❖

बावा भल्लो जी की अमर कथा

यह कथा बावा पं॰ देवराज के मुख से प्रस्तुत की गई है जिसको लिखकर एक भक्त (डा॰ विरेन्द्र कुमार गुप्ता (Dental Surgeon), सपुत्र स्वर्गीय लाला बिशनदास गुप्ता, 378-A गांधी नगर जम्मू) ने बावा भल्लो जी के चरणों में अर्पित किया है।

यह सदियों पुरानी (करीब 550 साल पुरानी) बात है जो आज भी अमर है। इसे साक्षात करने व अपने मनोरथ पूर्ण करने के लिए हज़ारों लोग दूर-दूर से यहाँ आते हैं और अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करते हैं।

बावा भल्लों जी गाँव मथवार के रहने वाले थे। इनके पिताजी का नाम श्री० मोती राम जी था, जिनका छोटी आयु में ही स्वर्गवास हो गया था। इनके पिताजी के स्वर्ग सिधारने के बाद ये अपनी माता जी के साथ रहते थे। यह गायों के रखवाले और सेवादार थे। यह हर रोज़ गायें चरवाने के लिए मथवार से सरोट चन्द्रभागा नदी के किनारे जाते थे। वहाँ गायें चरवाते-चरवाते वे सरोट गाँव में तालाब की खुदवाई करते रहते थे। उधर वहाँ पर उनका एक मित्र बन गया, जिसका नाम बगड़ा था, वह जात से सूड़े राजपूत था। इसके वहाँ पर आम के पेड़ थे।

एक बार बगड़े का कुछ कड़कयाल (ठक्कर) राजपूतों के साथ एक आम के पेड़ पर झगड़ा बन गया। बगड़ा जी झगड़े का फैसला करवाने के लिए गाँव में पंचों को बुलवाने के लिए गये। जाते समय वह बावा जी को पेड़ की रखवाली के लिए छोड़ गये। कुछ समय के बाद बावा जी इस भावना के साथ, कि पेड़ के फल पंचों के आने तक कोई नहीं तोड़ेगा, वे स्नान संध्या करने व गायों को पानी पिलाने के लिए नदी पर चले गये।

बावा भल्लो जी की संध्या करते-करते कुछ कड़कयाल (ठक्कर) लोगों ने पेड़ से सारे आम तोड़ डाले और टोकरे भरने शुरू कर दिये। इतनी देर में बावा जी को किसी व्यक्ति ने संदेश दिया, कि

जिस आम के पेड़ की आप रखवाली कर रहे हैं, उसका सारा फल तोड़ दिया गया है। यह बात सुनकर बावा जी दौड़ते हुए वहाँ पहुँचे और देखा कि लोगों ने आम के फलों से टोकरे भर लिए हैं। यह दृश्य देखकर बावा जी ने कहा, कि आप लोगों ने यह आम क्यों तोड़े? इसपर उन लोगों ने गुस्से में आकर बावा जी को अनसनी बातें कही। फिर भी बावा जी ने शान्त स्वर में उनको कहा, कि यह आम आप नहीं ले जा सकते हो, और इनको जहाँ से तोड़ा है वहाँ पर लगा दो। यह असम्भव बात सुनकर लोग हैरान हो गये और कहने लगे कि इस संसार में कोई भी व्यक्ति पेड़ से टूटे हुए फल वापिस नहीं जोड़ सकता। इसपर लोगों ने उत्तर दिया कि अगर आप में कोई ऐसी शक्ति है तो आप ही फलों को पेड़ से जोड़कर दिखाओ। इस बात को सुनते ही बावा जी ने प्रभु को पुकार कर कहा, कि हे प्रभु अपने भक्त की लाज रखो और सारे फल व पत्तियाँ पेड़ के साथ जोड़ दीजिए। ईश्वर ने उनकी सच्ची पुकार सुनकर उनको ऐसी शक्ति प्रदान की, कि बावा जी ने सभी फल व पत्तियाँ नीचे से उठाकर ऊपर फेंकने शुरू कर दिये और जहाँ-जहाँ से वह टूटे थे, वहाँ-वहाँ वह जुड़ते गए। यह दृश्य देखकर सभी लोग हैरान होकर खडे के खड़े रह गए।

इस घटना के बाद बावा जी ने मथवार में अपनी माता जी को संदेशा भेजा, कि वह वहाँ से एक कटारा साथ लेकर आयें। शाम के समय माता जी कटारा लेकर सरोट पहुँच गई। वहाँ उन्होंने बेटे से पूछा, कि मुझे यहाँ क्यों बुलवाया गया है। बावा जी ने उत्तर दिया, कि लोगों ने मुझे बहुत गन्दी बोली मारी है, जिसके

कारण मैंने अपनी शक्ति दिखा दी है और अब इस देह को त्यागने के लिए चिता तैयार कर ली है। यह सुनकर माता जी कहने लगी कि तेरे बगैर मेरा शरीर कैसे रहेगा, मैं भी तेरे साथ अपना शरीर त्याग दूँगी। माता जी नें चिता पर बैठकर पुत्र को गोद में ले लिया और प्रभु की शक्ति से उनके थनों में दूध आ गया और माता जी अपने पुत्र को दूध पिलाने लगी। फिर बावा जी ने भगवान से प्रार्थना की, कि इस चिता को अग्नि प्रदान करो और सूर्यदेव न अग्नि प्रदान की।

सूर्यदेव भगवान की जय।

बावा भल्लो जी की जय।

इसके पश्चात गायों ने चिता को घेरा डालकर आवाज़ लगाई, कि हम कैसे रहेंगी, तो बावा जी ने चिता से आवाज़ लगाई, कि आप जंगल जाओ, घास चरो, पानी पियो, मैं आप के साथ हूँ। मरा नहीं हूँ।

देह त्यागते समय बावा जी ने अपने वंश वालों को कहा, कि इस मथवार हदूद के जो आम हैं इनको कोई न बेचे न कोई पेड़ों को काटे व लकड़ी बेचे, धर्माथ कोई भी खा सकता है, खाने के लिए ले जा सकता है, पर कोई भी व्यक्ति इन्हें बेच नहीं सकता।

बावा भल्लो जी ने अपनी जन्म भूमि स्थान की जागृति काफी अरसे के बाद करवाई और बावा पं० देवराज जी को सुपुर्द की। इसके बाद बावा पं० देवराज जी ने यहाँ पर बहुत से मन्दिर व पक्के मकान बनवाये। यहाँ पर यात्रियों के लिए पक्के कमरों व

खाने-पीने की चीज़ों की सुविधा का पूरा इन्तज़ाम है।

यहाँ पर जो भी व्यक्ति शुद्ध मन व क्षद्धा के साथ आता है वही मनोवांच्छित फल प्राप्त करता है। इस स्थान पर पैसे या प्रसाद की आवश्यकता नहीं, बल्कि श्रद्धा के फूलों की आवश्यकता है। यहाँ पर हर वर्ष बसन्त पंचमी के दिन विशाल यज्ञ का आयोजन किया जाता है, जिस में भाग लेने के लिए हज़ारों लोग दूर-दूर से आते हैं और बावा जी का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

जय बावा भल्लो जी की

सम्राट विक्रमादित्य और योगी गोरखनाथ जी

सम्राट विक्रमादित्य-। ने अपना राज्य 655 A.D. में संभाला और 681 A.D. तक किया। तालमंची और नरीर के मुताबिक सम्राट ने सितम्बर 654 और जुलाई 655 के बीच अपना राज्य संभाला। इन का राज्य उत्तरी भारत से ले कर दक्षिण भारत तक फैला हुआ था। सम्राट ने अपनी ताकत के बलबोते अपने पूर्वजों की खोई हुई जायदाद को वापस ले लिया और एक धार्मिक राज्य कायम किया। अपने एक ही ज़ुबानी हुक्म के तहत उन्होंने ब्राह्मणों और ईश्वर के नाम पर दी हुई सहायता (जो कि बंद कर दी गई थी) को फिर से शुरू कर दिया। सम्राट के धार्मिक गुरू श्री मेघाचार्य (Shri Meghacharya) बताए गए हैं।

एक बार सम्राट शिकार पर निकले थे, तो वह एक काले हिरण का पीछा करते-करते एक घनघोर जंगल में पहुँच गए। इस जंगल में एक बरगद के नीचे योगी गोरखनाथ जी बैठे थे। उस समय उनकी वृत्ति अन्र्तजगत् में विचरण कर रही थी। योगी के पीछे खड़े हो कर सम्राट उनकी खुदमस्ती की बातें सुनने लगे। योगी यूं कह रहे थे -

"दुआ माँग! दुआ कर! दुआ से ज़मीन तक फट जाती है और आसमान तक उड़ जाता है। जिस काम को कोई नहीं कर सकता, उसको दुआ कर सकती है। प्रार्थना कर प्रार्थना।

अगर तू उसको देख लेगा, तो उसके परदे में परदा ही क्या रह जायगा? विचित्र परदा तो इसी लिये बनाया गया है कि उसको कोई देख न ले।

सब जगत् परमात्मा में है। परमात्मा मुझ में है, तो महात्मा बड़ा हुआ न परमात्मा से?

शक्ति की उपासना करने वाले 'रावण' बन जाते हैं और शिव की उपासना करने वाले 'राम' बन जाते हैं।

इस विशाल भूगोल में स्त्रियां-ही-स्त्रियां हैं। उनकी इच्छा है कि ज़मीन पर जो रहे, सो एक स्त्री बन कर।

इस विशाल भूगोल में सब पागल-ही-पागल रहते हैं। अगर कोई होश में लगता है तो उसे पागल लोग पागल कहने लगते हैं; क्योंकि वे खुद पागल हैं।

ज़मीन कहती है, कि मैं बड़ी और आसमान कहता है कि मैं बड़ा। औरत कहती है कि मैं बड़ी और मर्द कहता है कि मैं बड़ा। वास्तव में न ज़मीन बड़ी, न आसमान बड़ा। बड़ी है 'भूल', जो कि दोनों को अहमक बनाये हुए है।"

सम्राट मन-ही-मन सोच रहे थे कि कुछ बातें समझ में आती हैं और कुछ नहीं। या तो यह कोई योगी है या कोई पागल। सोचते-सोचते सम्राट ने कहा - क्यों जी यहाँ कोई काला हिरण दिखाई दिया, तो योगी ने अपनी धुन में कहा -

"मैं यहाँ नहीं रहूँगा। जहाँ सब अंधे-ही-अंधे हैं, वहाँ मैं नहीं रहूँगा, जहां सब पागल-ही-पागल हैं, वहाँ मैं कैसे रह सकूँगा? जिस गाँव के सब लोग नशेबाज हैं, उस गाँव में मेरा गुज़ारा कैसे होगा? नहीं-नहीं औरतों के इस शहर में मेरा निवास नहीं रह सकता।"

फिर सम्राट ने कहा - "क्यों जी! तुम कौन हो? मेरी बात नहीं सुनते?"

गोरखनाथ जी - "आप की अप्रकाशित 'विधान' नामक नाटक पुस्तक में दो भाग हैं, एक 'दुःखान्त नाटक' और दूसरा 'सुखान्त नाटक'। दुःखान्त नाटक पहले खेला गया और सुखान्त नाटक बाद को खेला जायेगा। परन्तु इस दुःखान्त नाटक का अंतिम परदा कब उठेगा? इसकी समाप्ति किस संवत् में होगी? ऐसा न हो, कि आप 'सुखान्त' का समय भूल जाऐं। आप में चाहे कोई अवगुण न हो, किंतु भूल का अवगुण तो है ही।"

फिर सम्राट ने पूछा – "क्यों जी! यहां से कोई गाँव नज़दीक है?

गोरखनाथ जी – "यह धरती का देश बहुत बड़ा है, यह विशाल धरती का देश, पानी के देश के बीचोबीच सो रहा है और पानी का देश, आग के देश में हिलोर मार रहा है, तो भी इस धरती पर रहने वाले समस्त कीटाणु बेफिक्री के इंतज़ाम सोच रहे हैं, निधड़क घूम रहे हैं सब निशाचर।"

इस पर सम्राट ने सोचा कि पूरा पागल मालूम होता है। मैं पूछता हूँ आगरे की बात और यह देता है दिल्ली की खबर।

तब तक गोरखनाथ जी का वह पालतू काला हिरण वहां आ पहुँचा, जिसके पीछे महाराज परेशान हो रहे थे। महाराज ने एक तीर चला दिया और हिरण मर [illegible] वहीं योगीचर गोरखनाथ जी की गोदी में गिर पड़ा। उनकी चितवृत्ति अन्तर्जगत् से हट कर इस बाहरी जगत् में आ गई। हिरन को मरा हुआ देख गोरखनाथ जी ने सम्राट से कहा – "तुम कौन हो?" इसपर वार्तालाप यूँ हुई –

विक्रमादित्य – "भारत के उदय-अस्त का मैं राजा हूँ।"

गोरखराथ जी – "भारत का उदय जब होगा तब होगा, तुम्हारा अस्त तो आज हो जायेगा।"

विक्रमादित्य – "क्यों?"

गोरखनाथ जी – "इस निरपराध और पालतू हिरण को क्यों मारा?"

विक्रमादित्य – "मैं राजा हूँ, जिस को चाहूँ मारूँ।"

गोरखनाथ जी – "मैं नहीं मानता कि तुम राजा हो। शूर नहीं, क्रुर हो।

विक्रमादित्य – "तुम्हारे न मानने से क्या होता है?"

गोरखनाथ जी – "हमारे न मानने से तुम राजा रह कैसे सकते हो?"

विक्रमादित्य – "तुम क्या करोगे मेरा?"

गोरखनाथ जी – "जो तुमने हिरण का किया, ठीक वही।

विक्रमादित्य – "तुम्हारे पास कोई हथियार तो है ही नहीं, फिर मुझको मारोगे कैसे?"

गोरखनाथ जी – "हथियार से मारा करते हैं हिजड़े लोग। हमारी दुआ ही हमारी तलवार है। दुआ से ज़मीन तक फट जाती है। तुम्हारा फट जाना कौन सी बात है?"

विक्रमादित्य – "क्या मैंने कोई अपराध किया है?"

गोरखनाथ जी – "बड़ा भारी।"

विक्रमादित्य – "क्या?"

गोरखनाथ जी – "मार वही सकता है, जो जीवन दे सकता हो। जो जीवन देना नहीं जानता, उसको मारने का हक नहीं है। अगर ताकत हो तो इस हिरण को जीवित करो।"

विक्रमादित्य – “मर कर कोई जीवित नहीं हो सकता। यह बात प्रकृति के नियम के विरुद्ध है।”

गोरखनाथ जी – “प्रकृति के नियमों को तुम क्या जानोगे? प्रकृति का नाम ही सुन लिया या उसे कभी देखा भी है? विष खाने से आदमी मर जाता है, परन्तु शंकर जी विष खा कर अमर हो गये। बिना जड़ को कोई पौधा नहीं होता; किंतु अमरबेल बिना मूल के ही फलती है। सम्भव और असम्भव दोनों नियमों की नियमावली की माला जो प्रकृति पहने है, उसका नाम ही सुना है या कुछ जानते भी हो?”

विक्रमादित्य – “मुझे फुरसत नहीं, जो ज्यादा बकवाद करूँ। हिरण को लेकर राजधानी लौटना है।”

गोरखनाथ जी – “हिरण को लेकर? हिरण को छोड़ कर ही राजधानी चले जाओ, तो मैं जानुँ? बिना इसे जीवित किये तुम एक डग नहीं रख सकते। हज़ार बातों की एक बात यह है कि इसे जीवित करो या मरने को तैयार हो जाओ।”

विक्रमादित्य – “तुम कौन हो?”

गोरखनाथ जी – “प्रजा को बनाने और बिगाड़ने का खेल राजा लोग खेला करते हैं। हम योगी वे लोग हैं जो राजाओं के बनाने और बिगाड़ने का खेल खेलते हैं।”

विक्रमादित्य – “क्या तुम इस हिरण को जीवित कर सकते हो?”

गोरखनाथ जी - "यदि जीवित कर दें तो?"

विक्रमादित्य - "तो भारत का सम्राट तुम्हारा गुलाम हो जायेगा।"

गोरखनाथ जी - "कञ्चन, कामिनी और कीर्ति की आपातकमनीय त्रिमूर्ति राजपाट को छोड़ कर नम्रता, ब्रह्माचर्य और त्याग की आपातभयावनी त्रिमूर्ति भक्तिमार्ग में आ जाओगे?"

विक्रमादित्य - "ज़रूर आ जाऊँगा।"

अमरविद्या या प्राणकला के एक आचार्य गोरखनाथ जी ने उसी क्षण मरे हुए हिरण को सचमुच जीवन दिया।

गोरखनाथ जी - "राजा बड़ा कि योगी?"

विक्रमादित्य - "राजा केवल मार सकता है, पर योगी मार भी सकता है और जीवन भी दे सकता है। अब आप मुझे अपना शिष्य बना लें।"

गोरखनाथ - "नहीं विक्रमादित्य, अभी तुम्हें देश-विदेश की देखभाल करनी है। तुम पर-उपकार कर अपना जीवन उच्च बनाओ और ऐसे कार्य करो कि तुम्हारा नाम अमर हो जाये। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।"

विक्रमदित्य-I के बाद उनके पुत्र विनयदित्य (681 से 696 A.D.) ने राज्य किया। उसके बाद विज्यदित्य ने 696 से 733 A.D. तक, विक्रमादित्य-II ने 733 A.D. से 744/45 A.D. तक और कीर्तिवरमन ने 744/45 से 757 A.D. तक राज्य

किया। माना जाता है कि कीर्तिवरमन इस शासन के आखरी राजा थे।

इस से अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है, कि बावा सहजनाथ जी की कथा कितनी पुरानी है।

ज्वालामुखी

स्यालकोट से गोरखनाथ दक्षिण स्थानों में भ्रमण करते हुए जब ज्वाला देवी के स्थान कोट कांगड़े पहुँचे और ज्वाला देवी ने गोरख गुरु को आता देखा, तो खुद मन्दिर से निकल कर आगे बढ़ गोरखनाथ से भेंट करने आई। गोरख गुरु ने देवी को नमस्कार कर कुछ देर वार्तालाप किया। जब वह नमस्कार कर चलने को हुए, तब ज्वाला देवी ने आग्रह किया, कि बेटा गोरखनाथ, क्या एक रोज़ मेरे मन्दिर में ठहर कर मेरे हाथ का बनाया हुआ प्रसाद भी नहीं पाओगे? गोरखनाथ जी बोले - "माता जी, आपका मन्दिर अपवित्र है। जहां मन्दिर में माँस का चढ़ावा चढ़ाया जाता है, वहाँ का भोजन मैं नहीं कर सकता।" ज्वाला देवी बोली - "बेटा गोरखनाथ, तुम समझते हो कि मैं मदिरा-मांस पसन्द करती हूँ, सो गलत है। परन्तु ये कलयुगी पापी नीच ब्राह्मण अपनी जिह्वा के स्वाद के कारण मेरे नाम पर, मेरे भोले-भाले भक्तों को बहका कर मदिरा-मांस चढ़वाते हैं। इसीलिए मन्दिर के पुजारियों को मुझ से किसी भी प्रकार की सिद्धि प्राप्त नहीं हुई है। इसलिए तुम मुझे

मांस-भक्षणी मत समझो। मैं अपने हाथों से बना कर तुम्हें पवित्र भोजन ही खिलाऊंगी।"

गोरखनाथ बोले - "माता, आपकी बात मैं एक शर्त पर मानने को तैयार हूँ कि जो अन्न मैं माँग कर लाऊँगा, उसे आप अपने हाथों से बना कर खुद खाओगी और मुझे खिलाओगी।"

देवी ने गोरख गुरु की जब शर्त स्वीकार कर ली, तब गोरख गुरु बोले - "माता जी, मैं भिक्षा मांगने जाता हूँ। आप चूल्हा जला कर मेरा इन्तज़ार करना, क्योंकि भिक्षा माँग कर लौटने का कोई मेरा निश्चित समय नहीं है। जब मैं लौट कर आ जाऊँ, तब तुम भोजन बनाना शुरू करना।" इतना कह कर गोरख गुरु अपने शिष्यों को साथ लेकर भिक्षा माँगने चल दिये। ज्वाला देवी उनके लौटने के इन्तज़ार में चूल्हा जलाये बैठी हैं। तभी से उस स्थान का नाम ज्वालामुखी पड़ा है।

खिचड़ी का चमत्कार और गोरखपुर

ज्वाला देवी के स्थान से चल कर गोरख गुरु विविध स्थानों का भ्रमण करते हुए अन्त में पूर्व दिशा के एक गाँव में अपना भिक्षा-पात्र लिये जम कर बैठ गये। लोगों ने भिक्षा-पात्र में भिक्षा डालना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु गोरख गुरु के चमत्कार से भिक्षा-पात्र खाली का खाली ही रहा। जनता ने चमत्कार की चर्चा सुन अपने-अपने घरों से ला-ला कर हज़ारों मन अनाज उस पात्र में

डाल दिया, परन्तु भिक्षा-पात्र को न भरना था न भरा। इस घटना की खबर दूर-दूर तक फैल गई। तभी पाटन नगर के एक व्यक्ति ने आकर गोरख गुरु से कहा - "नाथ जी आप दया करके मेरे घर चलें। मेरे घर कोई संतान नहीं है। मेरी तुच्छ धन-सम्पत्ति की तो बात ही क्या, मैं अपना शरीर तक भेंट में देने को तैयार हूँ। उसकी बात सुन गोरख गुरु अति प्रसन्न हुए और उसे आर्शीवाद दे कहा - "अभी तुम अपने घर पहुँच कर सम्पत्ति की व्यवस्था करो। थोड़े दिन पीछे जब मैं तुम्हारे गाँव में आऊँगा तब तुम से भेंट लूँगा।" गोरख गुरु को शीश नवा कर वह सज्जन अपने गाँव को चला गया और गोरखनाथ उस स्थान से उठ कर पश्चिम की तरफ जा बैठे। वहाँ उन्होंने एक छोटी-सी झोंपड़ी बनाई और लोगों से कहना शुरू किया, अब ज़ो अन्न आवे, इस झोंपड़ी में डालना। गोरख गुरु की आज्ञा के अनुसार अन्न झोंपड़ी में पड़ने लगा। जब थोड़ा अन्न झोंपड़ी में जमा हो गया, तब अपने शिष्यों से कहा - "तुम घोषणा कर दो, कि जो भी दीन-दुःखी हो, वह इस झोंपड़ी से अपनी ज़रूरत के लिये भरपूर अन्न ले जाये। इस घोषना को सुनते ही दूर-दूर से आकर उस झोंपड़ी से हज़ारों व्यक्ति भर-भर झोली और बांध-बांध गठरी अन्न ले जाने लगे।

इस प्रकार का आश्चर्यजनक कमाल देखकर दूर-दूर तक योगी गोरख गुरु का नाम फैल गया। उसके पश्चात् योगेश्वर ने खिचड़ी का चमत्कार दिखाया, कि एक कनस्तर में पाँच सेर दाल-चावल की खिचड़ी बनाई। खुद खाई और अपने शिष्यों को खिलाई, और उसके पश्चात् हज़ारों मनुष्यों ने उस कनस्तर की

खिचड़ी को खाया, पर कनस्तर भरा का भरा ही रहा। इसी प्रथा को यह माना जाता है कि खिचड़ी गोरख प्रसाद है और खिचड़ी ही सालाना मेल के दिन प्रसाद के रूप में बनाई जाती है। इसके पश्चात् उन्होंने वहाँ की जनता से कहा, कि अभक्ष भोजन को त्याग देना चाहिए। मांस-मदिरा का मन्दिरों में भोग न लगावें। जिस जगह गोरख गुरु ने खिचड़ी बांटी थी, उस जगह का नाम ही गोरखपुर पड़ गया था।

गोरखा जात

गोरखपुर गुरु अपने भक्त को अपने साथ लेकर धवलगिरी पर कुछ दिन रहे और जब अपने इस नये शिष्य को नाथ पंथ का उद्देश्य बताना चाहा, तभी इन्हें सूचना मिली की नेपाल के पास यहाँ से लगभग अस्सी कोस दूर सन्तों का बड़ा भारी सम्मेलन हो रहा है। वह अपने नवीन शिष्य को साथ लेकर उस स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ पर्वत के निकट सम्मेलन हो रहा था। वहाँ पहुँच कर गोरख गुरु ने यह देखा, कि समारोह में शामिल होने वाले ज्यादातर योगी वाम मार्गी हैं। जिनका विचार हम नाथ पंथियों से कतई नहीं मिलता है। उन्होंने वहाँ से लौटने का तुरन्त निश्चय किया। जिस समय गोरख गुरु वापिस जाने को हुए, तभी नीलकण्ठ की यात्रा करके कुछ नेपाली भक्त आ गये। उन्होंने गोरख गुरु को सम्मेलन में से जाते हुए देखकर प्रार्थना की - "हे महाराज, आप कुछ दिन के लिए हमारे साथ नेपाल चलने की कृपा करें। हम लोग

आपके गुरु मछेंद्रनाथ के अनुयाई हैं। इस समय जो महेन्द्र देव नाम का हमारा राजा है उसने बौद्ध धर्म अपना लिया है और हम लोगों पर भारी अत्याचार कर रहा है। हमारे साथ चलकर आप हमारे दुखों को दूर करें।" नैपालियों की प्रार्थना पर गोरख गुरु उनके नेपाल को चल पड़े। उन्होंने पाटन नगर के समीप भोगवती नदी के निकट बैठकर घोषणा की - "जब तक मैं आसन जमाये बैठा रहूँगा, तब तक इस राज्य में वर्षा नहीं होगी।"

गोरख गुरु की घोषणा के होते ही राज्य भर में पानी बरसना बन्द हो गया। जनता में त्राहि-त्राहि मच गई। राज्य कोष समाप्त हो गये, तो राजा महेन्द्र देव बुरी तरह घबरा गया। उसने राज्य ज्योतिषी को बुलाकर पूछा - "मेरे राज्य में वर्षा न होने का क्या कारण है?" ज्योतिषी ने विचार कर बताया - "आप ने मछेंद्रनाथ के शिष्यों पर जो अत्याचार किये हैं, इसलिये मछेंद्रनाथ का शिष्य गोरखनाथ भागवती नदी के तट पर आसन जमाये बैठा है। जब तक वह आसन से नहीं उठेगा, यहाँ वर्षा नहीं होगी।"

जब राजा ने गोरख गुरु को आसन से उठाने का ज्योतिषी जी से उपाय पूछा, तो उन्होंने उत्तर दिया - "हे राजन् सरल उपाय तो ये है कि आप मछेंद्रनाथ की मूर्ति को सजे हुए रथ में बिठाकर बाजे-गाजे के साथ उनकी रथ यात्रा निकालो। जब रथ गोरख गुरु के निकट पहुँचेगा, तो अपने गुरु को प्रणाम करने के लिए वह आसन से उठ बैठेंगे। तभी वर्षा होने लगेगी और आपकी इच्छा पूरी हो जायेगी।"

राजा महेन्द्र देव को ये सलाह पसन्द आई और उन्होंने तुरन्त ही मछेंद्रनाथ की मूर्ति को सजे हुए रथ में बिठा कर शोभा यात्रा वहाँ पहुँची जहाँ गोरखनाथ विराजमान थे। तब वह अपने गुरु की मूर्ति को प्रणाम करने के लिए आसन से उठ बैठे। उनके उठते ही राज्य भर में मूसलाधार वर्षा होने लगी।

तब राजा महेन्द्र देव ने गोरख गुरु के चरणों में मस्तक नवा कर क्षमा-याचना की और कहा आज से नाथ पंथ के योगियों से कोई आँख मिलाने की हिम्मत नहीं करेगा। नेपाल नरेश के वचन सुनकर गुरु गोरख नाथ अपने नवीन शिष्य को साथ लेकर एक पर्वत की खो में निवास कर योग की शिक्षा देने लगे। अपने शिष्य को योग विद्या सिखाते उन्हें बारह वर्ष का समय हो गया तब वहीं नज़दीक ग्राम के रहने वाली एक वृद्धा स्त्री और उसका बलवन्त नाम का सुपुत्र आकर गुरु गोरख की सेवा में संलग्न रहने लगे। इधर राजा महेन्द्र देव ने गोरख नाथ को जो नाथ पंथी संतों की रक्षा का आश्वासन दिया था, वह उसे भुला बैठा और नाथ पंथी संतों पर पहले से भी अधिक अत्याचार होने लगे। जब ये समाचार गोरख गुरु को मिला तो उन्हें नेपाल नरेश पर बड़ा क्रोध आया। उन्होंने नेपाल नरेश को गद्दी से हटाने का संकल्प कर लिया। परन्तु राजा बनाया किसे जाए, उन्होंने निश्चय किया कि इस वृद्धा स्त्री के पुत्र बलवन्त को ही मैं राजा बनाऊंगा, वह ही इस योग्य है। ये सब कुछ सुनकर पहले तो बलवन्त घबरा गया। परन्तु अंत में गोरख गुरु की योग विद्या का चमत्कार समझ कर राजा बनने को राज़ी हो गया। तब गोरख गुरु ने बलवन्त को आज्ञा दी कि वह

तालाब में से मिट्टी लेकर वीर पुरुषों की मूर्तियां जितनी अधिक से अधिक बना सकता है बना डाले।

गोरख गुरु का आदेश मानकर बलवन्त ने तालाब से मिट्टी लेकर कई हज़ार मिट्टी के पुतले तैयार किये, तब गोरख गुरु ने संजीवनी विद्या के मंत्र पढ़ कर उन सब पुतलों को सजीव कर दिया। फिर दिव्यास्त्र मंत्र पढ़कर सब ही पुतलों को तरह-तरह के हथियारों से सुसज्जित कर दिया, इस तरह कुछ ही समय में कई हज़ार सैनिकों की सेना सज गई। इसके पश्चात् गोरख गुरु ने बलवन्त के मस्तक पर वज्रास्त्र मंत्र से अभिमंत्रित भष्मी को लगाया और उसके शीश पर हाथ रख कर कहा, तुम युद्ध में अजेय बने रहोगे। ये आर्शीवाद दिया। गोरख गुरु का शीश पर हाथ रखना था, कि बलवन्त का शरीर हृष्ट-पुष्ट हो गया और वह बलवान राज कुमार जैसा सुन्दर दिखाई देने लगा। फिर वह एक हाथी पर सवार हो राजा महेन्द्र देव से युद्ध करने को अपनी सेना लेकर चल पड़ा। योगी मछेंद्रनाथ की जै बोलकर बलवन्त की सेना नेपाल की राजधानी में दाखिल हो गई और मारा-मार शुरू कर दी। राजा महेन्द्र देव इस आक्रमण से घबरा गया। उसने अपने सेनापति को भारी सेना लेकर युद्ध करने को भेजा और आप हाथी पर सवार होकर जंग के मैदान में आ गया। परन्तु कुछ अरसे में ही उसकी सेना पीठ दिखाकर भाग खड़ी हुई। नेपाल नरेश हार गया और उसे ये भी पता चल गया, कि यह सब कुछ जो घटना घटी है वह गोरख गुरु की आज्ञा का उलंघन करने का नतीजा है। जो मुझे भोगना पड़ेगा। नेपाल नरेश ने आकर गोरख गुरु के चरण पकड़

लिए और अपने गुनाहों की माफी माँगी। इस पर गोरख गुरु बोले, "राजन् मैंने बलवन्त को नेपाल का राजा बनाने का वचन दिया है। यदि तुम अपना भला चाहते हो, तो बलवन्त को अपना दत्तक पुत्र स्वीकार कर अपने राज्य का उत्तराधिकारी घोषित करो, इसके अलावा दूसरा उपाय तुम्हारी भलाई का कोई नहीं है।" नेपाल नरेश ने गोरख गुरु का कहना स्वीकार कर बलवन्त को अपना दत्तक पुत्र मान लिया और राजगद्दी का अधिकारी स्वीकार कर लिया। राजा महेन्द्र देव के बाद बलवन्त देव नेपाल की राजगद्दी पर बैठे। गोरख गुरु ने नेपाल नरेश राजा बलवन्त देव को आर्शीवाद दिया, "जब तक हमारे गुरु मछेंद्रनाथ की यहाँ पूजा होती रहेगी, तुम्हारा राज्य अटल रहेगा।" बलवन्त देव ने गोरख गुरु की आज्ञा मान उनके गुरु की बराबर रथयात्रा निकाली, उनकी पूजा की और अपनी संतान को भी बराबर पूजा करने का आदेश दिया, जिसे एक के बाद एक नरेश बराबर करते चले आये, इसलिए अब तक अटल राज्य है और जो मिट्टी के पुतलों की उन्होंने सेना तैयार की थी, उन्हीं की संतान आज भी गोरखा जाति के नाम से प्रसिद्ध है।

ब्रह्मा पूजन और पुश्कर

यह एक पौराणिक कथा है कि एक बार ब्रह्मा जी के मन में विचार आया कि पृथ्वी पर सभी देवताओं के तीर्थ स्थान हैं, इसलिए उनका भी स्थान स्थापित होना चाहिए। ऐसा विचार कर के उन्होनें स्वस्ति-हो-स्वस्ति (मंगल-ही-मंगल) शब्द उच्चारण करते

हुए हाथ से उत्तम कमल का पुष्प पृथ्वी पर फैंका। वह कमल का फूल पहले एक स्थान पर गिरा, फिर दूसरे और उसके बाद तीसरे स्थान पर जा पहुँचा। तीनों स्थानों पर पवित्र, निर्मल, स्वच्छ जल निकला।

यह कुण्ड ज्येष्ठ मध्य और कनिष्ठ नाम से जाने जाते हैं। इन जगहों को ज्येष्ठ पुश्कर, मध्य पुश्कर और कनिष्ठ पुश्कर भी कहा जाता है। ज्येष्ठ पुश्कर अजमेर (राजस्थान) से 13 किलोमीटर है। इस तरह जगह की स्थापना के साथ ही वहां यज्ञ की तैयारी शुरू हो गई। क्योंकि यज्ञ में ब्रह्मा जी की पत्नी का होना ज़रूरी था, उन्होंने नारद जी को सावित्री को बुलाने के लिए भेजा। जब सावित्री तैयार हो गई, तो नारद जी ने सलाह दी, कि आप दूसरे ऋषियों की पत्नियों को भी साथ ले लें, क्योंकि वहां सभी ऋषि बैठे हुए हैं और आप अकेली होंगी। यह बात सावित्री को ठीक लगी और वह दूसरे ऋषियों की पत्नियों को न्योता देने लगी।

इधर नारद जी ने आकर सूचित किया, कि सावित्री के आने में कुछ देर लगेगी। इधर यज्ञ का महूरत निकला जा रहा था। इस को ध्यान में रखते हुए ऋषियों ने निश्चय किया, कि ब्रह्मा जी की दूसरी शादी कर दी जाए। इन्द्र जी को लड़की तलाश करने भेजा, तो वह एक गोप (एक छोटी जाति) कन्या को ले आए। इन्द्र जी ने ही उस कन्या को पवित्र किया और उसका नाम गायत्री रखा। कहा गया है कि पवित्र करने के लिए लड़की को गाए के मुहँ में डाला और मलद्वार से बाहिर निकाला। इसलिए कन्या का नाम गायत्री रखा। शादी हो गई और यज्ञ आरम्भ हुआ, कुछ देर के

बाद सावित्री जब यज्ञ स्थान पर पहुँची, तो अपने स्थान पर किसी गोप कन्या को देखकर उन की आँखें गुस्से से लाल हो गई। जैसे ही ब्रह्मा जी ने सावित्री को देखा, तो उन्होंने तथा बाकि देवताओं ने भी अपना सिर झुका लिया। उन्होंने ब्रह्मा जी से पूछा, क्या यह सच है कि आप ने इस गोप कन्या से शादी की है, अगर आप ने सोचा कि यज्ञ के लिए लड़की से शादी करना ज़रूरी है, तो आप ने तीनों लोकों में से किसी ब्राह्मण कन्या को क्यों नहीं चुना। आप ने धर्म के विरूद्ध काम किया है इसलिए में आप को श्राप देती हूँ, कि इस जगह यानि पुश्कर को छोड़कर आप की कहीं भी पूजा नहीं होगी। जो जीव किसी भी दूसरी जगह पर आप की पूजा करेगा, वह गरीब हो जाएगा, यह कहकर उन्होंने अपना मुँह मोड़ लिया।

जब ब्रह्मा जी ने सावित्री को जाते हुए देखा, तो उन्होंने बताया कि हमारा कोई कसूर नहीं है, यज्ञ का शुभ आरम्भ का सही समय बीता जा रहा था, इसलिए ऐसा करना पड़ा, लेकिन सावित्री ने यज्ञ स्थान को छोड़ने का इरादा कर लिया था और उन्होंने रत्नागिरि की ऊँची पहाड़ी पर जाकर तपस्या शुरू कर दी। इसी कारण ब्रह्मा जी की पूजा केवल पुश्कर में ही होती है।

❖ ❖ ❖

मन्दिर

तालाब तिलो, जम्मू

मन्दिर
अखनुर